चन्दामामा
फरवरी १९६९

Chandamama
Press
VADAPALANI
MADRAS 26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of Others....

चन्दामामा

फरवरी १९६९

कोलगेट से सांस की दुर्गंध रोकिये और दंत-क्षय का दिनभर प्रतिकार कीजिये !

क्यों कि : एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेंटल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंत-क्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक रोगाणुओं को दूर कर देता है।

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है, और कोलगेट-विधि से खाना खाने के तुरंत बाद दांत साफ़ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का...अधिक दंत-क्षय रुक जाता है।

दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह बेमिसाल घटना है। केवल कोलगेट के पास यह प्रमाण है।

इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना अच्छा है—इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेंटल क्रीम से दांत साफ़ करना पसंद करते हैं।

आप को यदि पावडर पसंद हो तो कोलगेट टूथ पावडर से भी ये सभी लाभ मिलेंगे—एक डिब्बा महीनों चलता है।

COLGATE DENTAL CREAM

ज़्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और ज़्यादा सफ़ेद दांतों के लिए...

दुनिया में अधिक लोगों को दूसरे टूथपेस्टों के बजाए कोलगेट ही पसंद है।

DC.G.38 HN

अनुशासन से ही राष्ट्र का निर्माण होता है

"एक महान् राष्ट्र के लिये हर व्यक्ति को अनुशासन का पालन करना जरूरी है।"

महात्मा गांधी

MAHATMA GANDHI
BIRTH CENTENARY
OCT. 2, 1968 TO
FEB 22, 1970

महात्मा गांधी
जन्म शताब्दी
अक्तूबर 2, 1968 से
फरवरी 22, 1970

चन्दामामा
संचालक : चक्रपाणी
इस अंक में प्रकाशित "युग धर्म" नामक वेताल कथा हमें यह बताती है कि अकारण दण्ड पाने का कारण युग-धर्म भी कारण भूत होता है। "मेहनत का फल" नामक कहानी हमें यह सबक़ सिखाती है कि थोड़ी मात्रा में ही सही ख़ुद मेहनत करके कमाना पुरुष का लक्षण है। तभी धन के महत्व को कोई भी व्यक्ति समझ पाता है। अन्यथा उसके दुरुपयोग होने की संभावना है। "भारत का इतिहास" धारावाही इस अंक के साथ समाप्त हो जाती है।
वर्ष : २० फरवरी १९६९ अंक : ६

विद्रोहियों के हाथों में दिल्ली के आने के बाद तीन सप्ताहों तक शांति क़ायम रही। लेकिन ब्रिटीशवालों ने दिल्ली पर पुनः आक्रमण करने का जो प्रयत्न किया (१८५७ जून के प्रथम सप्ताह में), तब गंगागदी के उत्तर के सभी प्रांतों, राजस्थान, रोहिलखण्ड, कानपुर, लखनऊ, बाराणसी, तथा बिहार के कतिपय प्रदेशों में विप्लव की ज्वालाएँ भड़क उठीं। कुँवरसिंह के नेतृत्व में बिहार में जो विप्लव हुआ उसे विलियम टेलर (पटना डिविज़न के कमिश्नर) ने दबा दिया। कर्नल नील ने बाराणसी के विद्रोह को दबाकर हाथ में आये हुए सभी विप्लवकारियों का वध कराया। केवल क्रांतिकारियों को ही नहीं बल्कि जिन पर उनका संदेह था, उनको और नटखट लड़कों को भी ब्रिटीश अफ़सरों ने स्वयं फांसी पर लटकवाया। इलाहाबाद का क़िला जून ११ तारीख को मुक्त हुआ। कानपुर, दिल्ली और लखनऊ में विप्लव की ज्वालाएँ खूब भड़क उठी थीं। परंतु विशेषकर सिक्ख नेता, काश्मीर का शासक गुलाबसिंग, कई जमींदार और ब्रिटीशवालों के अधीन में काम करनेवाले भारतीय अफ़सर अंग्रेज़वालों के प्रति ईमानदार बने रहें। विप्लव को दबाने में भी मदद देनेवालों में सिंधिया का शासक, उसका मंत्री सर दिनकरराव, हैदराबाद का मंत्री सर सालारजंग, भोपाल की बेगम, नेपाल का मंत्री सर जंग बहादूर आदि हैं। मगर ब्रिटीश साम्राज्य की रक्षा करने का श्रेय सिंधिया तथा सर सालारजंग को प्राप्त हुआ।

कानपुर के क्रांतिकारियों का नेता नानासाहेब था। इन लोगों ने ब्रिटीशवालों

के अच्छे केंद्रों पर चढ़ाई की। उन केन्द्रों में ४०० आयुधधारी, कई स्त्रियाँ और बच्चे भी थे। ये जून ८ से २६ तक अपनी आत्मरक्षा करते नाना प्रकार की यातनाएँ झेलते रहें। विद्रोहियों के यह आश्वासन देने पर वे (जून २७) उनके अधीन हो गये कि उन्हें सुरक्षित इलाहाबाद भेज दिया जायगा। लेकिन ब्रिटीश सैनिक कानपुर से नावों में जब इलाहाबाद जा रहे थे, तब उन पर भयंकर रूप से गोलियों की वर्षा हुई। दो सौ ग्यारह लोग औरत, बच्चे "बीबीगड़" में बन्दी बनाये गये। उन सब का वध करने नानासाहेब और तांतिया टोपे ने आदेश जारी किया। इन घटनाओं के पश्चात गोरे लोगों ने अमानुष व्यवहार करना प्रारंभ किया।

दिल्ली पर फिर से अधिकार करने के निमित्त जून ८ तारीख को अंबाला से ब्रिटीश सैनिक आये। मेरठ से थोड़ी और सेना आयी और पंजाब से सिक्ख सैनिक भी आ पहुँचे। फिर क्या था, दिल्ली के क्रांतिकारियों के साथ संघर्ष शुरू हो गया। सितंबर १४ तारीख को दिल्ली में स्थित काश्मीर गेट ध्वस्त हुआ। छे दिन तक लगातार युद्ध चलता रहा, आखिर दिल्ली और राजभवन भी ब्रिटीशवालों के हाथ में आ गये। ब्रिटीश सैनिकों ने कई असहाय लोगों का वध करके दिल्ली को बुरी तरह से लूट लिया।

नाम के वास्ते बादशाह बने हुए बहादुरशाह हुमायूँ की समाधि के पास पकड़ा गया और रंगून में बंदी बनाया गया। वह अपनी ८७ साल की उम्र में (१८६२) में वहीं पर मर गया। उसके पुत्र और पोते गोली से उड़ा दिये गये।

लखनऊ में मई ३० को विद्रोह शुरू हुआ। वह नगर २१ मार्च १८५८ तक

ब्रिटीशवालों के हाथ में न आया। उस पर अधिकार करने में नेपाल के मंत्री जंग बहादूर ने ब्रिटीशवालों की मदद दी।

मध्य भारत में विप्लव शुरू करनेवाला नेता तांतिया टोपे नामक एक महाराष्ट्र ब्राह्मण था। वह २०००० सैनिकों के साथ यमुना नदी को पारकर नानासाहेब से जा मिला। लेकिन ६ दिसंबर १८५७ को ब्रिटीशवालों के हाथों में पराजित होकर भगा दिया गया और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई से मिलकर मध्य भारत में भयंकर युद्ध 'प्रारंभ किया। ब्रिटीश सेना ने ३ अप्रैल १८५८ को तांतिया टोपे को हराकर झांसी को घेर लिया।

४ अप्रैल को झांसी की रानी कुछ विश्वस्त अनुचरों को साथ लेकर झांसी के क़िले को छोड़ कलापी नामक प्रदेश में गयी। २२ मई को ब्रिटीश सैनिकों ने कलापी पर भी अधिकार कर लिया। इससे झांसी की रानी निराश नहीं हुई, बल्कि तांतिया टोपे को साथ लेकर ग्वालियर पर उसने हमला किया और सिंधिया को आगरा तक भगा दिया। नाना साहेब पेशवा घोषित हुआ। तांतिया टोपे और झांसी की रानी से डरकर ब्रिटीश वालों ने उनका अंत करने का निश्चय किया। आखिर उन्होंने ग्वालियर पर भी विजय पायी। १८५८ जून १७ तारीख को पुरुष वेश में युद्ध करते झांसी की रानी ने अपने प्राण छोड़ दिये। तांतिया टोपे आखिर मानसिंह नामक व्यक्ति की मदद से ब्रिटीश वालों के हाथों में पड़ गया और उसे फाँसी पर लटकाया गया। नाना साहेब नेपाल के जंगलों में भाग गया और वहीं पर मर गया। इस प्रकार भारत की आज़ादी का विप्लव १८५७ में समाप्त हो गया।
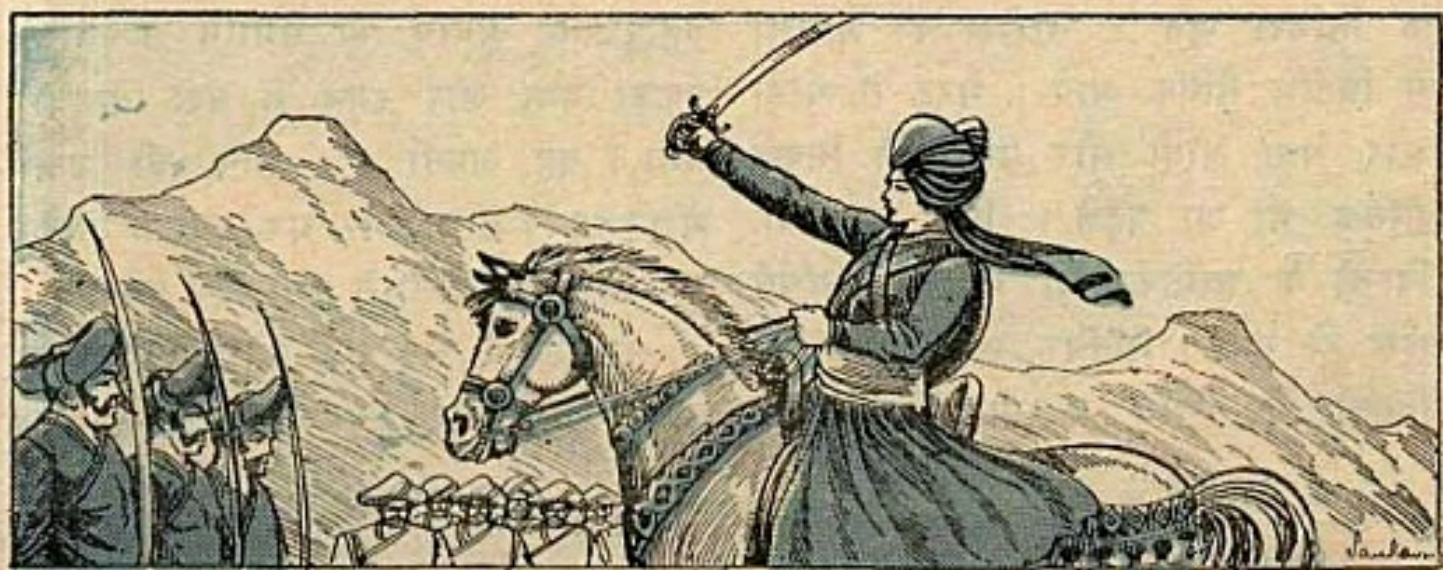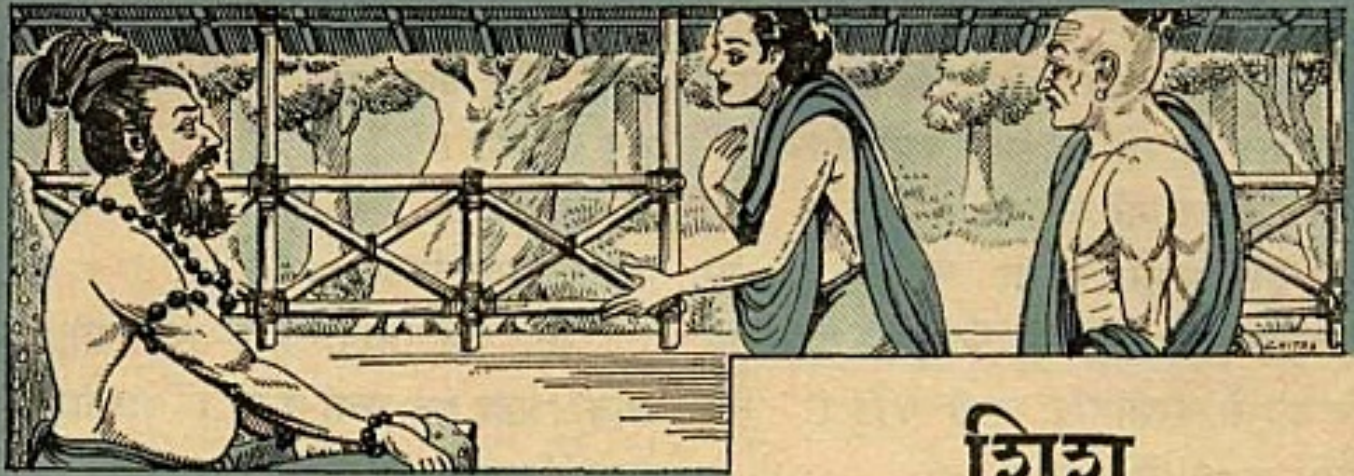
शिशु

अंगीरस शाखा के एक मुनि के एक लड़का पैदा हुआ। महर्षि अंगीरस ने उस लड़के को देखकर कहा–"इस बच्चे की बुद्धि का कोई बुढ़ापा न होगा। यह सदा शिशु ही बना रहेगा।" उसने उस बच्चे का नामकरण "शिशु" किया।

शिशु ने अपने पिता के पास ही अध्ययन किया; खुद ऋचाएँ रचीं। अपने से बड़े लोगों को भी वह "वत्स!" कहकर संबोधित किया करता था। यह देख उस लड़के का पिता शिशु को अंगीरस के पास ले गया और शिकायत की–"यह बड़ों के प्रति अविनय प्रदर्शित करते बोलता है।"

शिशु ने अपने कथन का समर्थन करते हुए अंगीरस से कहा–"बेटा! छोटे-बड़े के अंतर का अर्थ क्या है? मुझसे बड़े व्यक्ति को मुझे कुछ कहने की जरूरत नहीं समझता, उसे समझाना पड़ता है। समझानेवाले बड़ा होता है और सुननवाला छोटा होता है।"

अंगीरस ने शिशु की बातें सुनकर कहा–"हाँ, यह सत्य है। इसकी यह बात ही एक ऋक है। यह वेद-वक्ता के रूप में जन्म-धारण कर चुका है। इसकी दृष्टि में सब छोटे हैं।"

उस दिन से सब कोई शिशु का आदर करने लगे। मुँह खोल जो भी कहता, वे ऋचाएँ, साम और मंत्र बन जाते।

वरुण महर्षि का पुत्र भृगु शिशु से भी बड़ा था। उसने सोचा कि उससे भी छोटा व्यक्ति शिशु सबको वत्स या बेटा कहकर संबोधित करता है तो वह क्यों न करे। उसने भी जब बड़ों को "वत्स! बेटा!" कहकर संबोधित करना शुरू किया, तब सब लोग भृगु पर नाराज़ होने लगे।

गौरंग चन्द्र

"बच्चो! तुम लोग मुझसे ज्यादा समझदार हों, तो मेरे साथ चर्चा कीजिये।" भृगु ने उन लोगों से कहा।

"तुम चर्चा करना चाहते हो तो अंगीरस से चर्चा करके, शिशु की तरह तुम भी उन से आशीर्वाद प्राप्त करो।" बड़े लोगों ने भृगु से कहा।

भृगु ने अंगीरस के पास जाकर पूछा– "वत्स, अंगीरस! मुझसे शास्त्रार्थ करके यह साबित करो कि तुम मुझसे भी अधिक बुद्धिमान हो?"

"शास्त्रार्थ करने आने के पूर्व क्या तुम चारों दिशाओं में देख आये हो, बेटा! चारों ओर क्या क्या हैं?" अंगीरस ने भृगु से पूछा।

"क्या तुम देख आये हो?" भृगु ने उल्टा सवाल किया।

"हाँ, देख आया हूँ। तुम भी देख आओ, बाद हम चर्चा करेंगे।" अंगीरस ने उत्तर दिया।

भृगु ने अंगीरस की बात मान ली। वह पहले पूरब की ओर चल पड़ा। वहाँ पर कुछ पापी लोग मनुष्यों को काटकर "यह मेरा, यह तुम्हारा" कहते आपस में बाँट रहे थे।

"तुम लोग ऐसा क्यों करते हो?" भृगु ने उन पापियों से पूछा।

"पिछले जन्म में इन लोगों ने हमारा इसी तरह वध करके बाँट लिया। इसलिए आज हम इनके साथ वही व्यवहार कर रहे हैं।" दुष्टों ने जवाब दिया।

"इससे बचने का उपाय क्या है?" भृगु ने उन क्रूर आदमियों से फिर पूछा।

"तुम जाकर अंगीरस से पूछो!" उन लोगों ने उत्तर दिया।

भृगु वहाँ से दक्षिण की ओर गया। वहाँ पर भी उसे ऐसा ही दृश्य दिखायी पड़ा। पश्चिम और उत्तरी दिशाओं में गया, लेकिन वहाँ पर भी भृगु को वे ही दृश्य दिखायी पड़े! उत्तर की ओर से ईशान दिशा से होते जब वह लौट रहा था, तब भृगु ने दो नारियों को देखा। एक नारी देवता नारी जैसी थी, और दूसरी राक्षसी जैसी विकृत आकार की थी। उन दोनों के बीच एक भयंकर आकृतिवाला था। उसकी आँखें हल्दी के रंग की थीं! उसके हाथ में एक लाठी थी।

यह दृश्य भी भृगु की समझ में नहीं आया। भृगु अंगीरस के पास लौट आया और संकोच के मारे मौन खड़ा रह गया, क्योंकि वह उन दृश्यों का अर्थ समझ न पाया था।

भृगु को मौन देख अंगीरस ने पूछा—"चारों दिशाओं में क्या है? तुम क्या

देख आये हो? जब तक तुम उन दृश्यों का अर्थ और उनके निवारण का उपाय न जानोगे, तब तक तुमको शांति न मिलेगी!"

"मैंने जो जो दृश्य देखें, उनमें एक का भी अर्थ मेरी समझ में नहीं आया। उनका अर्थ आप से ही समझने को उन लोगों ने सलाह दी है।" भृगु ने कहा। "तब तो तुम शिशु से जाकर पूछो! वही तुमको जवाब देगा!" अंगीरस ने समझाया।

भृगु ने शिशु के पास जाकर उसने जो दृश्य देखे थे, उनका वर्णन किया और उनका अर्थ बताने की प्रार्थना की।

शिशु ने यों कहा :-

"तुमने पूर्वी दिशा में जिन पापियों को देखा, वे पेड़ हैं। यज्ञ कर्म से अपरिचित मानव अपने स्वार्थ के वास्ते पेड़, डाल, फूल व फलों को काटते हैं, इसलिए वे उन पेड़ों द्वारा काटे जा रहे हैं। इस से दूर रहना है तो अग्नि में पेड़ों की समिधाएँ डाल कर यज्ञ-कर्म करना होगा! दक्षिण में तुमको जो दुष्ट दिखायी दिये, वे पशु हैं, स्वार्थी मानवों ने पशुओं का वध किया था, इसलिए वे अब मनुष्यों को दण्ड दे रहे हैं। इसका अपवाद यज्ञ में पशुओं की बलि देना है! पश्चिम में तुमको जो पापी दिखायी दिये, वे औषधियाँ हैं। उनको भी यज्ञ में होम करने से कोई दोष न होगा! उत्तरी दिशा में तुमको जो क्रूर व्यक्ति दीख पड़े, वे जल हैं। उनका भी यज्ञ-जल के रूप में प्रयोग करने से दोष जाता रहेगा। घर लौटते तुमने जिन नारियों को देखा, वे श्रद्धा और अश्रद्धा हैं। उनके बीचे क्रोध की मूर्ति थी। यज्ञ कर्म में जो व्यक्ति श्रद्धा रख कर, अश्रद्धा को दूर रखेगा, वह क्रोध पर विजय पाकर सुखी रहेगा।"

शिशु से ये बातें सीखने के बाद भृगु ने अपना अहंकार त्याग दिया और वह भी एक बड़ा व्यक्ति बन गया।

शिथिलालय

[१३]

[पुजारी के प्रोत्साहन से गोंड नेता और उसके अनुचर शिखिमुखी के दल पर अचानक हमला कर बैठे। विक्रमकेसरी ने गोंड नेता को घोड़े पर से गिराकर, घोड़े को शिखिमुखी और नागमल्ली को सौंप दिया। घोड़े से गिरी नागमल्ली को गोंड लोग जंगल में स्थित शेर के एक पिंजड़े की ओर ले जाने लगे। बाद–]

गोंड लोगों ने नागमल्ली को शेर के पिंजड़े के पास ले जाकर, ज़मीन पर लिटाया। नागमल्ली अब तक बेहोश ही थी। पेड़ पर से यह सब देखनेवाले शिखिमुखी को इस बात का डर लगा कि वे नागमल्ली को पिंजड़े में शेर का आहार बना देंगे। लेकिन इतने में उसे गोंड नेता की बातें याद आयीं कि वह उसे बन्दी बनाकर उसके पिता सवर लट्टूसिंह से काफ़ी धन वसूल करना चाहता है। लेकिन उसके अनुचरों ने नागमल्ली को शेर के पिंजड़े के पास क्यों उतारा?

शिखिमुखी सोच ही रहा था कि गोंडों में से एक जोर से चिल्ला उठा– "भूतों का सरकार!" तुरंत शेर के पिंजड़े के पीछे की झाड़ियों से जवाब आया–"कौन है बे तू? तेरी खाल उधेड़ दूँगा! यहाँ से चला जा!"

गोंड़ों में से एक ने सारी कहानी सुनाकर कांपते हुए कहा–"पुजारी साहब ने इसे गगन-गुफ़ा के पास ले जाने को कहा है। मगर बड़ी देर से यह हिले-डुले बिना पड़ी हुई है। हमें डर लगता है कि कहीं यह मर न गयी हो। अगर ऐसा हुआ तो साहब हमारी जान लेंगे!"

भूतों के नेता ने नागमल्ली के नासिकापुटों के पास हाथ रखकर जाँच करते हुए कहा–"यह मरी नहीं, अभी जान है। घोड़े पर से गिरने की वजह से बेहोश हो गयी है। दवा और मंत्र फूँककर इसे होश में लाऊँ तो यह भाग जायगी। लो, यह भस्म ले जाओ! गगन-गुफ़ा के पास पहुँचते ही इसे नाक के पास रखो। चार दफ़े छींककर उठ बैठगी।" यह कहकर कमर में लटकनेवाली थैली में से एक पोटली निकाली और गोंड के हाथ दी।

गोंड ने वह पोटली लेकर छिपा ली और दूसरे गोंड को इशारा किया। दोनों नागमल्ली को कंधे पर डाल निकल पड़े। यह सब देखते शिखिमुखी ने सोचा कि उन गोंडों से बचाना आसान है। वह पेड़ों पर से थोड़ी दूर आगे बढ़ा।

गोंड लोग यह जवाब सुनकर घबरा गये और उस ओर ताकने लगे, जिस ओर से यह आवाज़ आयी। उन्होंने देखा, पेड़ की जटाओं की मदद से एक काला व नाटा आदमी उतर रहा है। उसके गले में हड्डियों की माला लटक रही है। हाथ में एक लंबी लाठी है। वह भूतों का नेता गोंड़ था।

भूतों का नेता शेर के पिंजड़े के पास पहुँचते ही नागमल्ली की ओर अचरज से देखते हुए बोला–"अरे, यह जवान लड़की कौन है? कोई देवता-जैसी मालूम होती है? यहाँ पर इसे कौन ले आया है? किसने मार डाला?"

उसने नागमल्ली को उठा ले जानेवाले गोंडों को बीच में रोकना चाहा।

शिखिमुखी ने अपने साथी शबर को आदेश दिया कि उसके लौटने तक गोंड भूतों के नेता पर निगरानी रखे। इसके बाद वह डालों पर कूदते थोड़ी दूर आगे बढ़ा, तब उसे उन शिलाओं के पास नागमल्ली को उठा ले जानेवाले गोंडों से मिलने एक और गोंड दल आगे बढ़ते दिखायी दिया। उस दल को देखते ही शिखिमुखी का उत्साह मंद पड़ गया। उसने निर्णय किया कि उस दल का सामना करके नागमल्ली को बचाना नामुमक़िन है! अब उसकी समझ में एक मात्र उपाय यही रहा कि विक्रमकेसरी के साथ आनेवाले शबरों की मदद से गगनगुफ़ा पर हमला किया जाय!...

शिखिमुखी ने सोचा कि विक्रमकेसरी के लौटने तक उसे मक्खी मारते बैठे रहना होगा! इसके अतिरिक्त कोई चारा न था। इतने में उसे भूतों के नेता और शेर के पिंजड़े की याद हो आयी। शिखी भी जंगली है, इसलिए वह जानता था कि जंगली जाति पर अधिकार पाने के लिए मंत्र-तंत्र की सख्त ज़रूरत है।
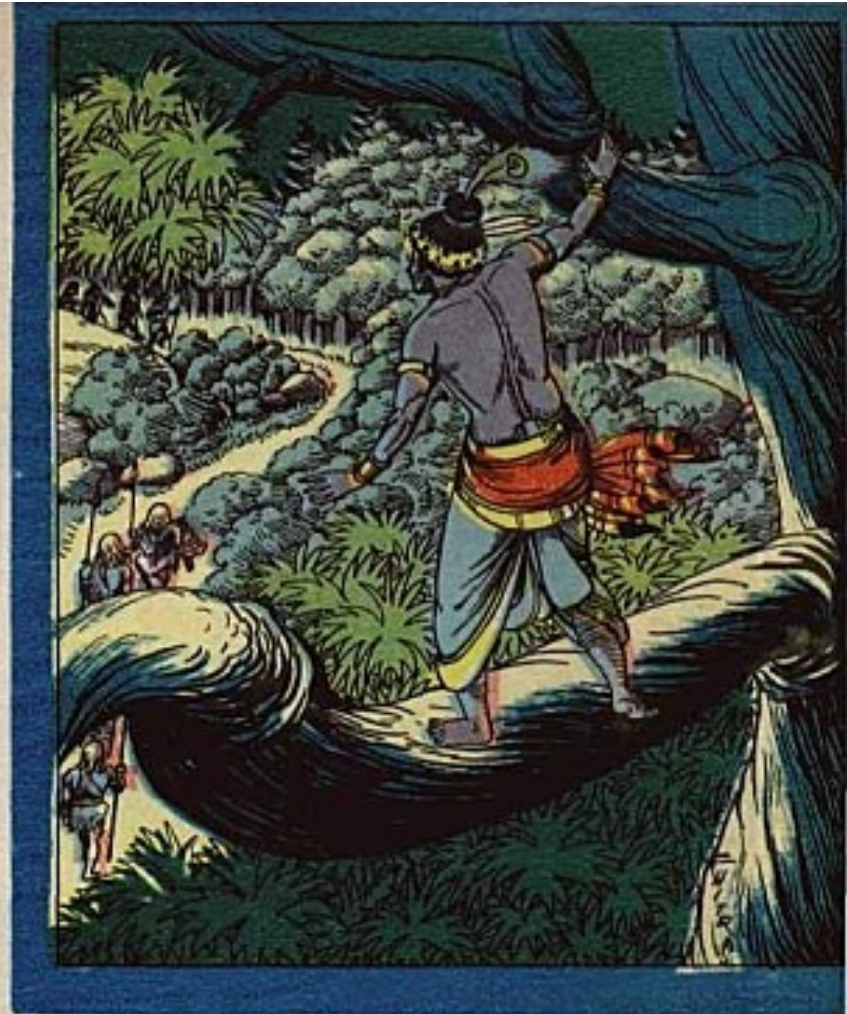
अगर वह गोंडों के भूतों के नेता को डरा-धमकाकर वश में करके उसकी मदद पा सके तो उसका काम बन जायगा। इस विचार के आते ही वह चुपचाप पेड़ों की डालों में से उछलते-कूदते शेर के पिंजड़े के पास जा पहुँचा।

भूतों का नेता एक बकरी के गले में रस्सी डाल उसे पिंजड़े के पास खींचकर ले जा रहा है। लेकिन वह मेंमें करते भागने के लिए उछल-कूद कर रही है। शिखिमुखी थोड़ी देर तक तमाशा देखता रहा, फिर शेर की भांति गरजकर पेड़ों की डालों में से भूतों के नेता के

सामने कूद पड़ा। भूतों का नेता घबरा उठा, चीख मारकर देखता क्या है कि उसके सामने शेर नहीं बल्कि एक शबर युवक है। इस पर अपने को संभालते हुए उसने लाठी उठायी और गरजकर कहा—"अरे बदमाश! कौन हो तुम? भूतों के नेता के साथ मजाक करना चाहते हो? तुमको भस्म कर विभूति भाल पर मल लूँगा। समझे!"

शिखिमुखी ने बड़ी होशियारी से उछलकर उसकी लाठी छीन ली, दायें हाथ से उसकी शिखा पकड़ ली। भूतों का नेता शिखी की पकड़ से छुड़ाने के लिए छटपटाने लगा। उसे डराने के ख्याल से बोला—"अरे पगले! तुम नहीं जानते, मैं कौन हूँ? बड़े गोंड के दल का आदमी हूँ। गोंड नेता के बाद में ही गोंडों का नेता हूँ! मुझे छोड़ दो।"

शिखिमुखी ज़ोर से हँस पड़ा और बोला—"अबे, तुम चाहे जो हो! मुझे क्या डर है? भूतों का नेता, यह बताओ, बाजू में एक तालाब है। शेर कब वहाँ पर पानी पीने आता है?"

भूतों का नेता यह सवाल सुनते ही गुस्से से पागल हो उठा। उसकी आँखें लाल हो गयीं। "अरे बदमाश! मुझसे सवाल करनेवाले तुम कौन हो? पहले मेरी चोटी छोड़ दो!" भूतों का नेता हुँकार कर उठा।

"तब तो तुमसे कोई सवाल न पूछूंगा! शेर ही बाक़ी काम देख लेगा।" यह कहते शिखिमुखी ने भूतों के नेता की कमर पकड़ ली और उसे शेर के पिंजड़े के भीतर ढकलेते हुए कहा—"जानते हो, बकरी के बदले तुमको शेर की बलि देता हूँ!" शिखिमुखी ने कहा।

भूतों का नेता थर थर कांपते हुए रोते बोला—"मुझे माफ़ कर दो, मुझे

मालूम न था कि तुम कौन हो? मुझे शेर का खाना न बनाओ! ज़िंदगी-भर मैं तुम्हारी सेवा करूँगा।"

शिखिमुखी ने उसे छोड़ते हुए कहा–"अच्छा, ऐसी बात हो तो मैं तुमको शेर का खाना न बनाऊँगा। तुम्हें ज़िंदगी-भर मेरी सेवा करने की ज़रूरत नहीं। बस, सिर्फ़ चौबीस घंटे मेरे कहे मुताबिक़ करो!"

"जी हुज़ूर! आज्ञा दीजिये! मैं आपका सेवक हूँ।" यह कहते भूतों का नेता शिखिमुखी के पैरों पर गिर पड़ा।

शिखिमुखी ने उसे उठने का आदेश देते हुए कहा–"सबर नेता लट्टूसिंह की लड़की को तुम्हारे गोंड़ उठा ले गये हैं, तुमने देखा ही है! मैं उसे आज रात को ही बचाना चाहता हूँ। यह न पूछो कि मैं कैसे उसे बचाऊँगा! मगर तुमको एक काम करना होगा। तुम्हारी गगन-गुफ़ा के सामने जो झोंपड़ियाँ हैं, उनके चारों तरफ़ जो कंटीले तार लगे हैं, उसके दर्वाज़े को आज रात कोई बंद न कर पाये, यह काम तुमको देखना होगा। लट्टूसिंह की लड़की को जहाँ तक हो सके, उस दर्वाज़े के पास की झोंपड़ी में रखने का इंतज़ाम करो।"

शिखिमुखी ने हड्डियों की माला को ज़ोर से पकड़ते हुए कहा।

भूतों का नेता छटपटाते बोला–"सारी महिमा इस माला में ही है, सरकार! अगर यह माला मेरे गले में न होगी तो कोई मेरी बात माननेवाला भी न होगा! सारे गोंड मुझे चमगादड़ से भी गया गुज़रा मानेंगे!"

"अच्छी बात है, लेकिन अपनी क़सम का पालन करोगे न? ख़बरदार! मुझे दग़ा देने की कोशिश करोगे तो एक न एक दिन तुमको शेर के पिंजड़े में डाल दूँगा! समझें?" शिखिमुखी ने उसे सावधान किया।

"सरकार! मैं तीन करोड़ पहाड़ी भूत और छे करोड़ जंगली भूतों की क़सम खाकर कहता हूँ कि मैंने जो क़सम खाई, उसका जरूर तामील करूँगा!" भूतों के नेता ने कहा।

"ऐसी बात हो तो तुम गगन-गुफ़ा में जाओ! इस बात का ख्याल रखो कि नागमल्ली को कोई खतरा न पहुँचे! मैं इस पिंजड़े की बात खुद देख लूँगा! अब चले जाओ!" शिखिमुखी ने कहा।

"अच्छा, हुजूर! मैं जाता हूँ! मैं वैसे हमेशा इस जंगल में ही रहता हूँ! वह

"जी, सरकार! जरूर आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। गोंडों के दल में मेरा निर्णय अंतिम होता है।" भूतों के नेता ने कहा।

"यह सही है, लेकिन तुम धोखा दोगे तो?" शिखिमुखी ने शंका प्रकट की।

"मैं आसमान के देवता की क़सम खाकर कहता हूँ! ठीक है न?" यह कहते भूतों के नेता ने अपने गले में पड़ी हड्डियों की माला को आँखों से लगाया।

"ऐसी बात हो तो वह माला मेरे हाथ दे जाओ, तुम अपनी बात रखोगे तो फिर मैं उसे तुमको लौटा दूँगा!"

जो सामने दीखता है, उसके पीछे ही मेरी झोंपड़ी है। अब मुझे इजाज़त दीजिये।" शिखी से इजाज़त लेकर भूतों का नेता वहाँ से चला गया।

शिखिमुखी ने पेड़ पर चढ़कर देखा कि भूतों का नेता किधर जा रहा है! वह गगन-गुफ़ा की ओर जा रहा है, इसलिए शिखी पेड़ से उतर आया। इसके बाद उसने बकरी को पिंजड़े में बांध दिया और अपने साथी शबर को पुकारा जो एक पेड़ पर गुप्त रूप में छिपा हुआ था। उसके उतर आते ही अपने साथ ले उस झोंपड़ी की ओर चला जिसे भूतों के नेता ने उसे दिखायी थी।

झोंपड़ी में शिखिमुखी ने देखा—शेर व भालू के चमड़े दीवार पर लटक रहे हैं। बीच में एक खंभे से कुछ खोपड़ियाँ लटक रही थीं। शिखी ने उनको ध्यान से देखा और एक खोपड़ी तथा एक शेर के चमड़े को हाथ में लिया। उसके मन में यह विचार आया कि रात को जब गोंडों के दल के प्रदेश में जाने पर शायद उन चीज़ों की ज़रूरत पड़े।

सूर्यास्त होने के थोड़ी देर पहले ही विक्रमकेसरी पचास-साठ अनुचरों के साथ शिखिमुखी से आ मिला। उनमें सवर और शबर युवक भी थे। शिखिमुखी ने विक्रम को सारी बातें समझायीं और कहा—"मुझे पूरा यक़ीन है कि भूतों का नेता अपनी बात रखेगा! इसलिए हम में से केवल पांच-छे लोग जाकर गोंडों की झोंपड़ियों में घुस पड़ेंगे और नागमल्ली को छुड़ा ले आयेंगे। ऐसा न होकर हम पूरे दल के साथ गोंडों पर हमला कर बैठेंगे तो नाहक़ खून ख़राबी होगी और क्रोध में आकर गोंड लोग नागमल्ली की कोई हानि भी कर बैठेंगे।"

"यह विचार अच्छा है, मगर हमारा असली दुश्मन तो शिथिलालय का पुजारी

है! वही इन सब बुराइयों की जड़ है। लगता है, तुम उसकी बात बिलकुल भूल गये।" विक्रमकेसरी ने कहा।

"उसको पकड़ने की कोशिश में ही तो हम इस तरह जाल में फँस गये। उसको मैं कैसे भूल सकता हूँ? आज रात को वह दिखाई देगा तो समझ लो, उसकी हड्डी-पसली तोड़ बैठेंगे!" शिखिमुखी ने दांत पीसते हुए कहा।

इसके बाद उन दोनों ने आपस में परामर्श किया और इस निर्णय पर पहुँचे कि सभी अनुचरों को साथ लेकर वे गगन-गुफ़ा के पास पहुँचेंगे, पर वहाँ केवल दस लोगों को साथ ले पहले गोंडों की झोंपड़ियों में पहुँचेंगे, ज़रूरत पड़ने पर और लोगों की भी मदद लेंगे।

सूर्यास्त के होते ही सब लोग जंगली रास्ते से गोंडों के नेतावाले पहाड़ी प्रदेश की ओर रवाना हुये। पंद्रह मिनट के बाद उनके पीछे शेर के दहाड़ने की आवाज़ गूंज उठी। उस आवाज़ को सुनते ही शिखिमुखी रुक गया और बोला—"भूतों के नेता ने जो पिंजड़ा खोल रखा था, उसमें शायद शेर फँस गया है। तुममें से पाँच-छे लोग जाकर शेर के साथ उस पिंजड़े को खींच ले आओ। मौक़ा मिलने पर गोंडों को पहाड़ पर से घाटी में ढकेल देंगे।"

शिखिमुखी के मुँह से यह बात निकलते ही दस-बारह शबर पिंजड़े की ओर दौड़ पड़े। शिखिमुखी की कल्पना के अनुसार शेर पिंजड़े में फँस गया था और बाहर निकलने का यत्न करते उपद्रव मचा रहा था। लकड़ी के पहियों पर निर्मित उस पिंजड़े को शबर लोग रस्सों की मदद से चर्र चर्र खींचकर ले जाने लगे।

(और है)

युग-धर्म

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट गया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल, सदा की भांति मौन श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–"राजन, इस कलियुग में अच्छाई के लिए कहीं जगह नहीं है। यह बात याद दिलाने के लिए मैं आपको रामशास्त्री की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए यह कहानी सुनो :–

द्वापरयुग समाप्त होकर जब कलियुग का प्रारंभ हुआ तब एक छोटे-से गाँव में एक ब्राह्मण-दंपति के रामशास्त्री नामक एक पुत्र था। रामशास्त्री का पिता पुरोहिताई करके अपने परिवार का पेट पालता था। पिता के बूढ़े हो जाने पर यह भार रामशास्त्री पर पड़ा।

एक दिन रामशास्त्री दूर के एक गाँव में शादी कराने गया। रामशास्त्री ने भर-

वेताल कथाएँ

पेट मिस्टान्न खाये। दान-दक्षिणा लेकर अपने गाँव की ओर चल पड़ा। वैशाख महीने की कड़ी धूप पड़ रही थी। दावत में घी ज्यादा खाने की वजह से रामशास्त्री का गला सूख गया। बड़ी खोज करने पर भी रामशास्त्री को कहीं एक कुआँ अथवा तालाब दिखायी न पड़ा।

लेकिन रास्ते में एक जगह ईख का खेत दिखायी दिया। रामशास्त्री ने सोचा कि खेत का मालिक कहीं दिखायी दे तो उससे एक ईख माँग ले और अपनी प्यास बुझा लेगा। पर वहाँ कोई न था। पहले जान बचा लेना सबसे बड़ा कर्त्तव्य समझकर रामशास्त्री ने एक ईख उखाड़ लिया, उसके रस से अपनी थोड़ी प्यास बुझाकर जान बचा ली। तब उसकी समझ में आया कि उसने जो काम किया, वह अपराध तो नहीं? वह यह नहीं जानता था कि उस खेत का मालिक कौन है? कम से कम ईख का मूल्य चुकाना उसका कर्तव्य है। यह सोचकर अपनी दक्षिणा में से एक तांबे का सिक्का निकाला और उसे ईख के डंटल पर रखकर वहाँ से चल दिया।

यह सब अदृश्य रहकर देखनेवाले कलिपुरुष ने एक हरिजन का रूप धारण किया, और वह रामशास्त्री के पीछे-पीछे चलने लगा। रामशास्त्री को यह बात बिलकुल मालूम न थी। घर पहुँचकर उसने पैर धोने के लिए अपनी माँ से पानी लाने को कहा।

माँ एक लोटे से पानी ले आयी और अपने पुत्र के पीछे खड़े कलि-पुरुष को देख पूछा—"बेटा, वह कौन है?" रामशास्त्री ने पीछे घूमकर कलि-पुरुष को देखा और उसकी समझ में न आया कि वह उसके पीछे आया ही क्यों है?

रामशास्त्री की माँ के सवाल का जवाब कलि-पुरुष ने ही दिया—"माई जी

मैं ताड़ी निकालनेवाला कालीदास हूँ! इस साहब ने रास्ते में मुझसे ताड़ी खरीदी और पैसों के लिए घर बुलाया है। इसीलिए पीछे-पीछे चला आया हूँ।"

"भगवन्! मुझे यही दिन देखने को ज़िंदा रखा!" यह कहकर रामशास्त्री की माँ बेहोश हो गयी।

इस बीच रामशास्त्री का पिता बाहर आया और अपनी पत्नी को ऊपर उठाते हुए अपने लड़के से पूछा—"क्या हुआ है, बेटा?"

रामशास्त्री कुछ कहने ही जा रहा था कि इतने मे कलि-पुरुष बोल उठा—"उनसे क्या पूछते हैं? मैं बताता हूँ, सुनिये!" यह कहते उसने पहले कही हुई बातें फिर सुना दीं।

रामशास्त्री का पिता क्रोध में आग बबूला हो उठा और बोला—"मेरा पुत्र कभी ताड़ी नहीं पी सकता। तुम ही ताड़ी पीकर अंट-संट बकते हो?"

कलि-पुरुष दृढ़ता से बोला—"मुझे झूठ बोलने की क्या जरूरत है? मेरी बात पर यक़ीन नहीं करते हैं तो अपने पुत्र से थोड़ा नमक खिलाइये, सारी ताड़ी उगल देगा! सचाई खुल जायगी!" पिता ने
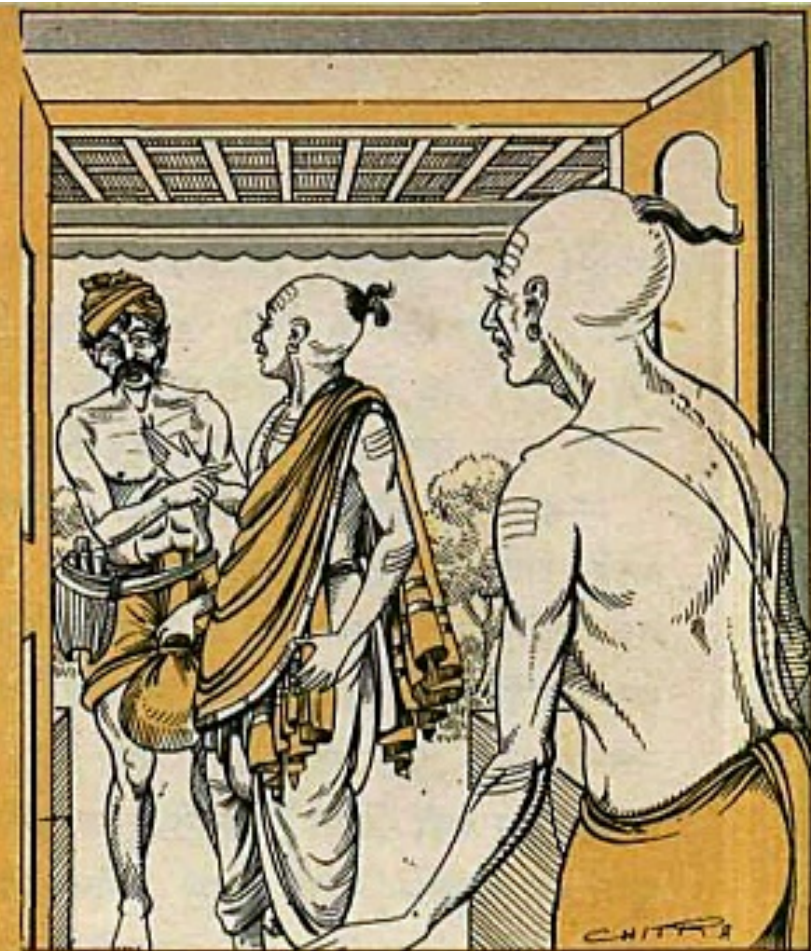
थोड़ा नमक लाकर रामशास्त्री को खिलाया। नमक खाने से रामशास्त्री ने वमन किया। इस बीच में रामशास्त्री के पेट में गन्ने का रस जीर्ण होकर ताड़ी की बू देने लगा।

रामशास्त्री के माँ-बाप को यह यक़ीन हो गया कि उसके बेटे ने ताड़ी पी ली है। रामशास्त्री से उसके पिता ने क्रोध में आकर कहा—"मैं आज तक यह सोचकर अभिमान करता था कि तुम जैसा गुणवान व्यक्ति कहीं ढूंढ़े भी न मिलेगा! पर तुमने हमारे वंश पर कलंक लगाया। आज से मैं यही सोचूंगा कि मेरे कोई पुत्र नहीं है और तुम यह

समझो कि तुम्हारे माँ-बाप नहीं हैं। तुम उसी हरिजन के साथ चले जाओ!" यह कहकर वह अपनी पत्नी के साथ घर के भीतर चला गया और दर्वाज़ा बंद किया।

रामशास्त्री को बड़ा दुख हुआ। उसने कोई अपराध नहीं किया, पर उस पर यह दोषारोपण किया गया। जिस हरिजन का उसने कभी चेहरा तक न देखा था, उसने उस पर यह दोष मढ़ दिया। उसने ऐसा क्यों किया? उसने तुरंत कलि-पुरुष से पूछा—"भाई, तुम कौन हो? तुमने मेरे माता-पिता से यह झूट क्यों कहा? मैंने कोई पाप नहीं किया।"

कलि-पुरुष ने रामशास्त्री की आँखों में देखते हुए कहा—"तुमने महान अपराध किया है। इसी लिए मैंने तुमको यह दण्ड दिया है। तुम भली भांति सोचो-खुद तुम्हें अपने पाप का परिचय मिल जायगा!" यह कहकर वह गायब हो गया!

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन! रामशास्त्री ने कौन-सा पाप किया है? जानते हुए न कहोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा!

इस पर विक्रमादित्य बोले—"रामशास्त्री का पाप यह है कि जिस खेत पर पहरा नहीं है, उस खेत से ईख लेकर अपने प्राणों की रक्षा करना अपराध है! उसमें तभी कलि-युग का धर्म शुरू हो गया। इसीलिए उसने जिस ईख को खाया, उसका मूल्य लगाकर वहाँ पर रख दिया। ऐसा धर्म और जायदाद पर अधिकार द्वापर युग में नहीं है। चूंकि रामशास्त्री में पहले ही कलिपुरुष का प्रवेश हो गया था, इसलिए कलिपुरुष उसे दण्ड दे सका।"

राजा के इस प्रकार मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

मेहनत की कमाई

एक गाँव में घनश्याम नामक एक लुहार था। वह अच्छा कारीगर ही नहीं, बल्कि मोटा-ताज़ा और सहनशील भी था। कुदाल, फावड़े, कुल्हाड़ी वग़ैरह वह खुद तैयार करता था। सिर्फ़ धौंकनी चलाने के लिए वह एक मज़दूर की मदद लेता था। तक़लीफ़ उठाकर मेहनत करना घनश्याम को बड़ा पसंद था।

घनश्याम के राधेश्याम नामक एक लड़का था। वह उसकी माँ रूपा की वज़ह से आलसी बना था। रूपा को अपने पति का पसीना बहाकर मेहनत करना कतई पसंद न था।

"तुम्हारी मेहनत में सौवाँ हिस्सा मेहनत किये बिना कई लोग तुम से ज्यादा कमाते हैं। दिन भर कड़ी मेहनत करके शरीर को थका देते हो! ऐसे ही करते जाओगे तो कितने दिन जिओगे!" रूपा अपने पति को उलाहना देती।

रूपा की बातें सुनकर घनश्याम कहता— "मेहनत की कमाई की क़ीमत तुम क्या जानो? आसानी से कमाया हुआ धन मिट्टी के बराबर होता है।"

लेकिन रूपा की दृष्टि में चाहे जैसे भी कमाया जाय, धन धन ही था। उसका भाई पढ़-लिखकर नौकरी करते आराम की ज़िंदगी जीता है। उसका लड़का भी पढ़-लिख कर नौकरी करे तो क्या ही अच्छा होगा। लेकिन लुहार का काम उससे नहीं कराना है। रूपा ने मन ही मन निश्चय किया। राधेश्याम को पाठशाला में भेजा गया, लेकिन पढ़ाई में वह कच्चा रहा। उल्टे वह मदरसे में जाने के बदले सारा दिन गाँव-भर खाक छानता और शाम को घर लौटता। उसके पिता ने निश्चय किया कि अब उसे पढ़ाई न आवेगी। लुहार का काम सिखलाने

महेन्द्र कपूर

के ख्याल से अपने बेटे को बुलाकर पूछा—"बेटा, दिन-भर बेकार क्या घूमा करते हो! कम से कम धौंकनी तो चलाओ!"

राधेश्याम को पढ़ाई से जितनी नफ़रत थी, उससे भी ज्यादा अपने पिता के काम से थी। इसलिए वह अपने बाप की आँख बचाकर घूमा करता था।

राधेश्याम के बढ़ते देख घनश्याम की घबराहट भी बढ़ने लगी। उसकी ताक़त दिन ब दिन घटेगी, लेकिन बढ़ेगी नहीं। उसका बेटा न घर के पेशे में कामयाब हुआ और न पढ़ाई में ही।

यह सोचकर एक दिन घनश्याम ने अपनी पत्नी से कहा—"तुम अपने लाड़ले बेटे से कह दो कि मेरे बदन में ताक़त के रहते ही वह हमारा पेशा सीख ले। मेरे बाद अगर वह यह काम न कर पाया तो हमारी दूकान बंद कर देनी पड़ेगी। राधेश्याम न घर का होगा और न घाट का। उसकी इच्छा मेरी कमाई से दिन काटने की रही है। मैं जो भी कमाऊँगा, उसे वह चार-पाँच दिनों में उड़ा देगा। उसके बाद उसे दर दर जाकर भीख मांगनी पड़ेगी!"

रूपा अपने लड़के को बहुत चाहती थी। इसलिए वह बोली—"तुम बेकार परेशान रहते हो, तुम्हारा ख्याल है कि हथौड़ा हाथ में लेने से ही वह जी सकेगा, नहीं तो नहीं! वह भी कोई न कोई काम ढूँढ़कर चार पैसे कमाने की फ़िक्र में है। तुम्हारी कमाई से वह गुलछर्रे तो उड़ाना नहीं चाहता।" रूपा ने समर्थन किया।

घनश्याम को ग़ुस्सा आया और तैश में आकर बोला—"हाँ, हाँ! वह कमायगा और तुम बैठकर खाओगी। मैं किसी भी दिन तीन रुपये से कम नहीं कमाता। तुम्हारा बेटा तीन रुपये नहीं, तीन छवन्नी कमा लाये तो देखूँ।"

उसी समय राधेश्याम ने घर में क़दम रखते अपने पिता की यह बात सुनी ।

"सुना, बेटा! तुम्हारे पिता कहते हैं कि तुम तीन छवन्नी भी नहीं कमा सकोगे!" रूपा ने अपने बेटे से कहा ।

"हूँ! तीन छवन्नी! तीन मिनटों में कमा लाऊँगा!" राधेश्याम ने कहा ।

अपने पिता की बात झूठा साबित करने का विचार राधेश्याम के मन में आया । लेकिन वह यह नहीं जानता था कि एक कौड़ी भी कैसे कमायी जाती है!

दूसरे दिन दुपहर तक राधेश्याम सारा गाँव घूमता रहा । तीन छवन्नी कमाने की बड़ी कोशिश की, लेकिन वह कामयाब न हो सका । आखिर दुपहर को खाली हाथ घर लौटा । "क्यों बेटा! कुछ कमा लाये हो?" माँ ने राधेश्याम से पूछा ।

"अभी तक मैं ने कोशिश ही कहाँ की? खाना तो खिलाओ! फिर जाकर कोशिश करूँगा!" राधेश्याम ने जवाब दिया । वह खा कर जो सोया, शाम को ही जाग पड़ा ।

"अरे बेटा! तुमने कहा था कि खाना खा कर कमा लाओगे! तुम अपने पिता के सामने मेरी बेइज्जती करोगे?" माँने पूछा ।

"आज तुम तीन छवन्नी दे दो, माँ! कल मैं कमाकर लाऊँगा!" राधेश्याम ने कहा।

अपनी और अपने बेटे की इज्ज़त बचाने के ख्याल से रूपा ने अपने पैसों में से तीन छवन्नी निकालकर राधेश्याम को दी।

रात को घर लौटते ही घनश्याम ने अपने बेटे को देख पूछा—"क्यों बेटा? कितने रुपये कमा लाये हो?"

"लीजिये! तीन छवन्नी कमा लाया हूँ।" यह कहते राधेश्याम ने अपनी माँ की दी हुई तीन छवन्नी अपने पिता के हाथ में रख दी।

घनश्याम ने पल-भर उसकी ओर ताककर कहा—"छी! यह तुम्हारी मेहनत की कमाई नहीं है।" यह कहते तीन छवन्नी चूल्हे में फेंक दी। राधेश्याम बिना कुछ बोले सर झुकाकर अपने पिता के सामने से चला गया। राधेश्याम बड़ी देर तक सोचता रहा कि उसके पिता को यह कैसे मालूम हुआ कि यह उसकी मेहनत की कमाई नहीं है।

दूसरे दिन रूपा ने अपने बेटे से कहा—"बेटा, कम से कम आज मेहनत करके कमा लाओ और अपनी बात रखो!"

उस दिन माँ की आँख बचाकर राधेश्याम ने लकड़ी की पेटी में से एक रुपये की चोरी की। मिठाई की दूकान पर जाकर एक छवन्नी की पकौड़ी और मिठाई खा ली। बची तीन छवन्नी जेब में डाले शाम तक गाँव में घूमता रहा और रात को घर लौटकर अपने पिता से बोला—"लीजिये, मेरी कमाई! तीन छवन्नियाँ हैं!" यह कहते पिता के हाथ में रख दी।

घनश्याम ने पिछले दिन की भांति उन छवन्नियों को ध्यान से देखा और

यह कहते फिर चूल्हे में फेंक दी–"छी! यह कमाई तुम्हारी मेहनत की नहीं है।"

इस बार राधेश्याम को बात लग गयी। उसने मन में निश्चय किया कि वह किसी तरह तीन छवन्नी कमाकर ही अपने पिता के सामने जायगा। उस दिन पड़ोसी गाँव में हाट लगा था। राधेश्याम ने वहाँ जाकर बोरे ढोये, थोड़ी मजदूरी की, दिन-भर मेहनत करने पर भी तीन छवन्नियाँ न मिलीं। दूसरे दिन भी उसी गाँव में रहकर गाड़ियों के अड्डे पर उसने मजदूरी की। दो दिन मेहनत करने से उसकी कमाई तीन छवन्नियों की हुई। उस रात को घर लौटकर उसने पिता से कहा–"मेरी मेहनत की कमाई लीजिये!" यह कहते तीन छवन्नियाँ उसने पिता के हाथ में धर दीं।

घनश्याम ने उस दिन भी पैसों की ओर नजर दौड़ाकर यह कहते चूल्हे में फेंक दी–"छी, यह भी तुम्हारी कमाई नहीं है!"

राधेश्याम चीख मारकर चूल्हे के पास गया और अपनी मेहनत की कमाई को बटोरने लगा।

"मैं मानता हूँ, यह तुम्हारी मेहनत की कमाई है। लेकिन इन तीन छवन्नियों के वास्ते तुमने कितने दिन की मेहनत की?" घनश्याम ने अपने बेटे से पूछा।

"दो दिन तक मजदूरी की।" राधेश्याम ने सर झुकाकर जवाब दिया।

"तुम अपनी खुद की दूकान पर दो दिन काम करते तो इससे दस गुने कमाते! बोरे ढोना इज्जत का काम समझते हो, बेटा!" घनश्याम ने पूछा।

राधेश्याम में ज्ञानोदय हुआ। वह दूसरे दिन से अपने पिता की लुहार के काम में मदद देने लगा। पिता के बूढ़े होने तक वह भी एक कुशल लुहार और कारीगर बना।

पागलपन

एक गांव में एक आदमी था। सब उसे पागल कहकर पुकारते थे। उसकी बातों और करनी के भी कोई माने न होता था। लेकिन कभी कभी उसके पागलपन की बातों में सूक्ष्म बुद्धिमत्ता प्रकट होती थी।

एक दिन सवेरे वह नदी के किनारे पहुँचा। वहाँ पर एक ब्राह्मण कमर तक पानी में खड़े हो, अंजुली में पानी भरकर सूर्य की ओर देखते, कोई मंत्र पढ़ते, उस पानी को फिर नदी में गिरा देता था।

"अजी, आप क्यों ऐसा करते हैं?" पागल ने उस ब्राह्मण से पूछा।

"मैं सूर्य भगवान को अर्घ्य दे रहा हूँ।" ब्राह्मण ने उत्तर दिया।

झट पागल भी नदी में उतर पड़ा। सूर्य की तरफ़ पीठ करके, अंजुली में पानी भरकर, वह भी उसे नदी में गिराने लगा।

"तुम क्या करते हो?" ब्राह्मण ने पागल से पूछा।

"मैं अपने बगीचे को पानी सींच रहा हूँ। वह पश्चिम की ओर है!" पागल ने जवाब दिया।

"अरे पगले, तुम यहाँ पर पानी गिरा दोगे तो तुम्हारा बगीचा कैसे सींचेगा?" ब्राह्मण ने हँसते हुए उसका मज़ाक उड़ाया।

"एक करोड़ मील दूर पर रहनेवाले सूर्य तक तुम्हारा अर्घ्य पहुँच सकता है, तो क्या दस मील की दूर पर रहनेवाले मेरे बगीचे तक पानी नहीं जायगा?" पागल ने ब्राह्मण से पूछा!

"अनिलकुमार"

पति-पत्नी

प्राचीन काल में एक गाँव में काशीनाथ और गिरिजा नामक दंपति था। वह परिवार संपन्न तो था, लेकिन उनके कोई संतान न थी। संतान के वास्ते उस परिवार ने कई व्रत किये, पर कोई फ़ायदा न हुआ। आख़िर वह दंपति तीर्थ यात्रा करने निकला। जब वे काशी में गंगाजी में स्नान कर रहे थे, तब गिरिजा की ओर एक थाली तैरती आयी। गिरजा ने थाली को हाथ में लेकर देखा तो उसमें हल्दी का पानी और सांप का एक बच्चा हिलता हुआ नजर आया। फिर जब उसने ध्यान से देखा तो लगा कि वह सांप का बच्चा नहीं बल्कि सांप के आकार का एक आभूषण है। गिरिजा ने सोचा कि वह गंगाजी के द्वारा उसे दिया गया प्रसाद है। इसलिए उसे अपने डेरे में ले जाकर फूलों से उसकी पूजा की।

दूसरे दिन सुबह गिरिजा ने थाली उठायी तो उसमें उसे आभूषण के बदले एक सुंदर लड़का दिखायी पड़ा। गिरिजा बहुत खुश हुई। उसे घर लाकर अपने बच्चे की तरह पाला। इस तरह से उसकी संतान का अभाव दूर हो गया। उस बच्चे का नामकरण माता-पिता ने गंगादत्त किया।

गंगादत्त धीरे धीरे बढ़ने लगा। वह बड़ा अक़्लमंद था। उसका चाल-चलन इतना अच्छा था कि सब कोई उसे प्यार करते थे। उसके युवा होते ही सुंदरी नामक एक अच्छी कन्या के साथ उसका विवाह किया।

गंगादत्त के विवाह होने के कुछ दिन बाद एक बूढ़ी कहीं से सुंदरी के पास आयी और बोली–"बेटी, मेरे अपने कोई नहीं है। मुझे घर में रहने दिया जाय तो मैं दिन-भर कोई न काम करके तुम्हारी मदद करती

दिवाकर झा

रहूँगी। दो जून खाना दो। उस बूढ़ा पर रहम खाकर सुंदरी ने उसे घर में रख लिया। वह सुंदरी को रोज तरह-तरह की कहानियाँ सुनाते, उसके विश्वास का संपादन करने लगी।

एक दिन बूढ़ी ने बातों के सिलसिले में सुंदरी से कहा—"तुम दोनों परस्पर बहुत प्यार करते हो, लेकिन तुम गंगादत्त के बारे में कुछ भी नहीं जानती।"

सुंदरी ने रोष में गर्व से आकर कहा—"मै अपने पति के बारे में सब-कुछ जानती हूँ।"

बूढ़ी ने हँसकर कहा—"तुम को अपने पति का असली नाम तक नहीं मालूम है।"

"क्यों नहीं? उनका नाम तो गंगादत्त है।" सुंदरी ने कहा।

"नहीं, उसका असली नाम तो हम में किसी को भी नहीं मालूम। तुम पूछकर देखो। अगर वह तुम से सचमुच प्यार करता है तो जरूर कहेगा।" बूढ़ी ने कहा।

उस दिन की रात को सुंदरी ने अपने पति से पूछा—"क्यों जी! आप अपना असली नाम तो बताइये।"

गंगादत्त सुंदरी की बात पर चौंक पड़ा और घबराये हुये स्वर में बोला—"मेरा असली नाम? मत पूछो! पछताओगी!"

सुंदरी को मालूम हो गया कि उसका असली नाम कोई दूसरा है! वह नाम जानने का सुंदरी हठ करने लगी। गंगादत्त बार बार यही कहता कि वह नाम मत पूछो! लेकिन उसने अपना असली नाम नहीं बताया।

सुबह होते ही गंगादत्त ने सुंदरी से पूछा—"क्यों, मुझे अपना असली नाम बताना ही पड़ेगा। हठ न छोड़ोगी?"

"हाँ, हाँ, आपको कहना ही पड़ेगा। आप भी क्यों हठ करते हैं?" सुंदरी ने कहा।

"अच्छा! तब तो मेरे साथ चलो।" यह कहते वह अपने बगीचे के पास सुंदरी को लेकर पहुँचा।

"अब भी कुछ समय है। तुम अपने विचार को बदलने को तैयार हो?" गंगादत्त ने पूछा।

"आपने तो कहा था कि असली नाम बताऊँगा। इसीलिए यहाँ तक मुझे ले आये हैं? आपको अपना असली नाम बताना ही पड़ेगा।" सुंदरी ने हठ किया।

"मैं नाग-पुत्र हूँ। मेरे असली पिता ने अभी तक मेरा नामकरण नहीं किया है।" यह कहते गंगादत्त तड़ाग में कूद पड़ा।

सुंदरी का कलेजा धक् धक् करने लगा। वह ज़ोर से रोते हुए बोली–"मेरी अक़्ल मारी गयी थी। अब ठिकाने लग गयी है। बाहर चले आइये।" यह कहते वह तड़ाग के चारों ओर घूमने लगी।

तब बूढ़ी ने आकर उसे सांत्वना देते हुए कहा–"सुनो, मैं तुम को असली कहानी सुनाती हूँ। मैं भी नाग स्त्री हूँ। तुम्हारा पति एक नागराज का पुत्र है। जब वह पैदा हुआ था, तब उसके शरीर में प्राण आयेंगे, यह सोचकर मैं ही उस बच्चे को एक थाली में गंगाजी पर ले आयी। लेकिन मेरी असावधानी से थाली गंगा की धारा में बह गयी। बहुत कोशिश करने पर भी वह मेरे हाथ न लगी। नागराज मुझ पर बहुत नाराज़ हो गये। मुझे कुछ ही समय पहले मालूम हुआ कि वह मानव-स्पर्श से मानव बनकर यहाँ बढ़ रहा है। उसे ले आने मुझे नागराज ने भेजा है। मैंने यह सोचकर कि उससे उनका असली नाम के पूछने पर उसके असली जन्म का स्फुरण होगा और वह पाताल में लौट आयगा। मैं जिस काम के लिए आयी थी, अब वह पूरा हो गया है।" यह कहकर बूढ़ी भी तड़ाग में कूद पड़ी।

सुंदरी ने समय-स्फूर्ति के साथ बूढ़ी का आंचल पकड़ा और वह भी उसके साथ पानी में कूद पड़ी। दोनों पाताल में पहुँचीं। तब बूढ़ी ने सुंदरी से कहा—"तुम भी साहस करके आ गयी? यहीं रहो, मैं देख आऊँगा कि तुम्हारा पति किस हालत में है।" बूढ़ी चली गयी।

थोड़ी देर में लौट कर बोली—"तुम्हारा पति बाजू के कमरे में सो रहा है। थोड़ी देर बाद उसकी माँ खाना लाकर रखेगी। तुम कमरे में जाकर छिप जाओ। तुम छिप कर उसके खाने के बाद जो जूठन होगा, उसे खाओ। इसके बाद उसके सामने जाओ। अब यह तुम्हारे हाथ की बात है कि तुम कैसे उसे वश में ला सकोगी।"

बूढ़ी ने सुंदरी को गंगादत्त के सोनेवाले कमरे में भेजा। सुंदरी उसी कमरे में एक जगह गुप्त रूप से छिप गयी। बूढ़ी के कहे अनुसार नागराज की पत्नी थाली में लाकर सोनेवाले गंगादत्त के समीप में रखकर चली गयी।

थोड़ी देर बाद गंगादत्त नींद से जाग उठा और खाने लगा। लेकिन उसे खाना अच्छा न लगा। थोड़ा खाकर हाथ-मुँह धोने चला गया। इस बीच तुरंत सुंदरी बाहर आयी और उस जूठन को खाकर फिर छिप गयी।

गंगादत्त ने लौट कर देखा कि थाली में खाना गायब था। "यह क्या हुआ? किसने थाली का खाना खाया?" ज़ोर से पूछा।

"मैंने ही खाया है। यह कहते सुंदरी बाहर आयी और बोली—"मुझे माफ़ कीजिये। कृपा करके मुझे भी अपने साथ यहीं रहने दीजिये।" गिड़गिड़ाने लगी।

सुंदरी को देखकर गंगादत्त को बड़ी खुशी हुई। लेकिन दूसरे ही क्षण वह परेशानी से बोला—"लेकिन यह कैसे

संभव होगा? तुम मानवी हो! मेरे पिता कठोर हैं। वे तुमको यहाँ देखेंगे तो जान से न छोड़ेंगे! पहले तुमको कहीं छिपाना होगा!"

सुंदरी सर झुकाये दुखी हो बोली– "आप मुझे कहाँ छिपायेंगे? कितने दिन छिपायेंगे? मैंने जो अपराध किया, उसका दण्ड मुझे भोगना होगा! आप मुझे क्षमा कर दीजिये। मैं यही आप से चाहती हूँ। आप के पिता मेरा वध करेंगे तो भी मुझे कोई चिंता न होगी! अपनी जान बचाने के लिए मैं इस लोक को छोड़कर न जाऊँगी!"

गंगादत्त थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर बोला–"यह समस्या तुम्हारे लिए ही नहीं, बल्कि मेरे लिए भी है। तुम यहीं रहो।" यह कहकर वह चला गया।

वह सीधे नागराज के पास गया और बोला–"मेरे वास्ते मेरी पत्नी भी आ गयी है। उसको आप जो दण्ड देंगे, वही दण्ड मुझे भी दीजिये। क्योंकि जैसे वह मुझे छोड़कर नहीं रह सकती, वैसे मैं भी उसे छोड़कर नहीं रह सकता। यहाँ आने पर मुझे खाना भी रुचता नहीं।"

नागराज अपने पुत्र की ओर बड़ी देर तक देखता रहा, फिर बोला–"बहुत समय तक मानव-लोक में रहने की वजह से तुममें नागों के लक्षण नहीं रहे हैं। इसलिए मानवी-पत्नी के वास्ते तुम परेशान हो। जैसे तुम चाहते हो, वैसे ही मैं तुम दोनों को एक ही प्रकार का दण्ड दूँगा। तुम दोनों फिर मानव-लोक में चले जाओ।"

नागराज ने अपने पुत्र और बहू को खाली हाथ नहीं भेजा, बल्कि अपार रत्न और उपहार देकर भेजा। मानव-लोक में पहुंचकर गंगादत्त और सुंदरी सुखपूर्वक जीवन बिताने लगे।

मंत्री कौन है?

एक राजा का प्रधान मंत्री अचानक मर गया। उसके अधीन तीन उप मंत्री थे। राजा के सामने यह सवाल उठा कि उन तीनों में से किसको प्रधान मंत्री बनावे? उनमें किसी एक को वह पद दिया जायगा तो बाक़ी दोनों के प्रति अन्याय हो सकता है? राजा खुद फ़ैसला नहीं कर सका कि इन तीनों में से प्रधान मंत्री के योग्य कौन है?

कुछ दिन बीत गये। एक बार राजा सदल बल नदी के तट पर पहुँचा। उसके साथ तीन उप मंत्री भी थे। सब नदी के किनारे बैठकर दुनियादारी की बातें कर रहे थे, तब राजा ने नदी में देखते हुए अपने उप मंत्रियों से पूछा—"पानी में कोई चीज़ बहती आ रही है। वह कौन चीज़ हो सकती है?"

तीनों में से एक ने आँखों पर हाथ रखकर देखते हुए कहा—"कोई फल जैसा लगता है!"

दूसरे ने खड़े होकर देखते हुए कहा—"हाँ, हाँ! महाराज! वह आम का फल है!"

इस बीच तीसरा आदमी उठा और अपने कोट व पगड़ी उतारकर किनारे पर फेंक दिया। तब नदी में कूदकर तैरता गया। उस समय यह फल भी उसके नजदीक़ आ गया था। उस आम के फल को लेकर तैरते किनारे पर आ पहुँचा और उसे राजा के हाथ में दिया।

कार्यकुशल उस उप मंत्री को राजा ने अपना प्रधान मंत्री बनाया।

ज्ञान-बोध

गोवर्द्धन पर्वत पर एक मुनि तपस्या कर रहा था। उसका नाम शमनक था। शमनक के मन में सिर्फ़ उसके जन्म को सार्थक बनाने की कामना थी। तपस्या शुरू करने के पहले उसने कई तत्ववेत्ताओं से इस संबंध में चर्चा की, लेकिन इससे उसे यह विश्वास नहीं हुआ कि उसका जन्म सार्थक होगा। किसीने उसे समझाया कि तपस्या के ज़रिये हर प्रकार की इच्छा की पूर्ति की जा सकती है। इसीलिए उसने गोवर्द्धन पर्वत पर जाकर कठोर तपस्या प्रारंभ की। एक पैर पर खड़े हो, धूप-वर्षा और जाड़े की परवाह किये बिना केवल जल और वायु का सेवन करते तपस्या की। फिर भी शमनक को अपने जन्म को सार्थक बनाने का विश्वास न हुआ। उसका मन आत्मानंद से भरने से दूर रहा, बल्कि निराशा और परेशानी से भर गया।

एक दिन शमनक सो रहा था, तब उसकी आँखों के सामने एक तेज दिखायी पड़ा। उसमें से ये सब्द सुनाई पड़े—

"वत्स! तपस्या रोककर ज्ञान की प्राप्ति करो। पर्वत से उतर कर पूरब की ओर जाओ। दुपहर के होते-होते तुमको एक मवेशी चरानेवाला आदमी दिखायी देगा, वही तुमको ज्ञान-बोध करा देगा।"

ये बातें सुनाकर वह तेज गायब हो गया। शमनक ने उठकर पूरब की ओर देखा। उसी समय सूर्योदय हो रहा था। शमनक पहाड़ पर से उतर कर, सीधे सूर्योदय की ओर चलता गया। थोड़ी दूर तक चलने पर उसे एक पहाड़ी नाला दीख पड़ा। शमनक ने उस नाले में स्नान किया, फिर पूरब की ओर अपनी यात्रा चालू की।

सूर्योदय होने के थोड़ी देर बाद शमनक को अस्पष्ट रूप से मुरली की आवाज़

यमुना प्रसाद

सुनायी पड़ी। उसके थोड़ी देर बाद गायों की रेवड़ आती देख पड़ी। एक गाय पर एक छोटी-सी लड़की बैठी थी। उसकी उम्र छे-सात साल की थी।

उस लड़की ने शमनक की ओर आँखें विस्फारित करके देखा। कठोर तपस्या करने के कारण शमनक दुर्बल हो गया था। उसकी दाढ़ी और मूँछें बढ़ी हुई थीं। उसके बाल जटाओं से हो गये थे। वह देखने में डरावना लगता था।

शमनक ने उस लड़की की ओर ध्यान नहीं दिया। उसकी आँखें गायें चरानेवाले की खोज कर रही थीं।

गायों की उस भीड़ के पीछे मुरली बजाते एक आदमी आ रहा था। उसकी उम्र बीस साल से अधिक न थी। मोटे कपड़े पहनने की वज़ह से वह गंवार जैसा दीख रहा था। लेकिन उसके चेहरे पर तेज टपक रहा था।

गायें चरानेवाले उस आदमी को देखते ही शमनक उसकी ओर तेजी से चला। शमनक को अपनी ओर आते देख उसने मुरली बजाना बंद किया। उसने सुना था कि गोवर्द्धन पर्वत पर एक मुनि तपस्या कर रहा है, इसलिए उस जटाधारी को देखते ही गायें चरानेवाले ने सोचा कि यह आदमी वही मुनि होगा!

शमनक ने मवेशी चरानेवाले को विनयपूर्वक नमस्कार करके कहा—"महाशय, मैंने बड़ी तपस्या की, फिर भी मुझे वह आत्मानंद प्राप्त नहीं हुआ, जो तुमको प्राप्त हुआ है। तुम धन्य हो! मुझे भी ऐसे आनंद की उपलब्धि के लिए आशीर्वाद देकर मेरे जन्म को सार्थक बना दो।"

गाय चरानेवाले व्यक्ति का चेहरा तमतमा उठा। वह क्रोध में आकर बोला—"आप बुजुर्ग हैं। मुझ जैसे गँवार का अपमान करना आपको शोभा नहीं देता।"

"मैं तुम्हारा अपमान नहीं करता हूँ और न तुम्हारा परिहास करता हूँ! मुझे तुमसे ज्ञानबोध प्राप्त करने का आदेश हुआ है। इसीलिए मैं तुम्हारी खोज में आ रहा हूँ। मुझे केवल यह बताओ कि तुमने किस प्रकार के प्रयत्न द्वारा ऐसे ज्ञान की प्राप्ति की है। मैं भी वैसा ही प्रयत्न करूँगा।" शमनक ने बताया।

मवेशी चरानेवाले को यह सब विचित्र-सा लगा।

"महात्मन, मैं काला अक्षर भैंस बराबर हूँ! मुझे ज्ञानोदय कहाँ हुआ है? उसके लिए मैंने प्रयत्न ही कहाँ किया है? जब से मैंने होश संभाला है तब से मैं मवेशी चरा रहा हूँ। मैदानों में पशुओं को चराना मात्र जानता हूँ! मैं हमेशा भगवान से यही प्रार्थना किया करता हूँ कि किसी भी पशु को किसी तरह की बीमारी न होने पावे। इससे बढ़कर मैंने कुछ नहीं किया है।" मवेशी चरानेवाले ने कहा।

"नहीं, नहीं, कोई बात जरूर होगी! तुम मुझसे छिपाते हो!" शमनक ने बताया।

"महात्मन, मैं कुछ छिपा नहीं रहा हूँ। बचपन से यही धंधा कर रहा हूँ। मेरे बाप भी यही काम किया करते थे। मैं जैसे यह काम इस लड़की को सिखा रहा

हूँ, वैसे मेरे बाप ने मुझे यह काम सिखाया है।" मवेशी चरानेवाले ने फिर कहा।

"वह लड़की कौन है? तुम्हारी बहन है या बेटी?" शमनक ने पूछा।

"मैं इसे फिलहाल अपनी बहन मान सकता हूँ, उसे बेटी भी कह सकता हूँ, लेकिन वास्तव में वह मेरे लिए दोनों नहीं है। वह जब छोटी लड़की थी, तब उसके घर में चोरों ने घुसकर उसके माँ-बाप को मार डाला और उसे जान से छोड़ गये हैं। उस हालत में वह मेरे हाथ लगी है। बेचारी, अबोध लड़की!" मवेशी चरानेवाले ने कहा।

"उस लड़की को लाकर तुमने उसे अपनी माँ या पत्नी के हाथ दिया है न?" शमनक ने पूछा।

"नहीं, मैंने ही पाला है। तब तक मेरी माँ मर गयी थी और मेरी शादी तक न हुई थी। मैंने ही उसे पाल-पोस कर बड़ा किया। आप देख रहे हैं न?" गाय चरानेवाले ने कहा।

"तब तो उस वक़्त तुम भी छोटे थे न?" शमनक ने पूछा।

"छोटा ज़रूर था, लेकिन देखने में मोटा-ताज़ा बैल जैसा था!" मवेशी चरानेवाले ने कहा।

"उस लड़की को पालने में तुमको तक़लीफ़ नहीं हुई?" शमनक ने पूछा।

"तक़लीफ़ की बात क्या बताऊँ? बेचारी लड़की थी। वह रो पड़ती तो मुझे मालूम न होता कि उसे पेट में दर्द होता है या सर में! कितनी बीमारियाँ कितनी तक़लीफ़ें! ओह, क्या बताऊँ?" गायें चरानेवाले ने कहा।

"उस लड़की को लेकर तुमने इतनी यातनाएँ क्यों झेलीं? तुमने अपनी मेहनत का कौन-सा फल चाहा था?" शमनक ने आश्चर्य में आकर पूछा।

मवेशी चरानेवाला पल-भर उसकी ओर विचित्र ढंग से देखता रहा, फिर बोला– "मेहनत का फल? उस लड़की का बड़ा होना क्या प्रतिफल नहीं है! उसे उठाकर नहीं घूमा? उसे नहीं खेलाया? उससे डगमगाते क़दम चलवा कर चलना नहीं सिखाया? उसे एक एक विद्या नहीं सिखायी? उसे गायें चराना नहीं सिखाया? यह सब प्रतिफल नहीं तो क्या है?"

शमनक की आँखों से आँसू गिरने लगे। "मुझे मालूम हो गया है कि तुम्हारा जन्म कैसे सार्थक हो गया, तुमको कैसे आनन्द प्राप्त हो गया? बचपन में ही तुममें प्रेम तत्व की आदत हो गयी। तुमने यह जान लिया कि निस्वार्थ भाव से दूसरों के वास्ते कष्ट झेलने में ही आनंद है। मैंने उसे तुच्छ समझा और अंधकार में भटक रहा हूँ। इस बुढ़ापे में मुझे ज्ञानोदय हुआ है। भगवान यदि मुझ पर अनुग्रह करके मुझे आयु दे तो मैं घर जाकर अपने आत्मानंद की खोज करूँगा!" यह कहते शमनक वहाँ से निकल पड़ा।

"ये मुनि कैसी विचित्र बातें करते हैं!" यह कहते वह गाय चरानेवाला अपनी मुरली निकालकर बजाने में तन्मय हो गया।

परोपकारी

पुराने ज़माने में एक राज्य पर उपेन्द्रवर्मा नामक एक राजा राज्य करता था। उसके दो पत्नियों थीं। दोनों पत्नियों के दो पुत्र पैदा हुये। उन दोनों पुत्रों की उम्र लगभग बराबर थी। बड़े पुत्र का नाम वेगवाहन और छोटे पुत्र का नाम पशुपति था। वेगवाहन स्वभाव से कठोर था और पशुपति कोमल हृदयवाला था। तो भी दोनों आपस में स्नेह रखते थे।

दोनों राजकुमार जब बड़े हुये तब राजा के पास जाकर बोले—"हम दोनों देशाटन करना चाहते हैं। हमारे पसंद की कन्याएँ मिल जायेंगी तो विवाह करके वापस लौटेंगे। वे कई देशों में घूमते-घूमते आखिर एक सुंदर बगीचे में पहुँचे। वहाँ पर एक सुंदर सरोवर था। उस में हंस तैर रहे थे। दोनों ने सरोवर में स्नान किया। पास के वृक्षों से फल तोड़कर खाये, फिर सरोवर के किनारे बैठ गये। एक हंस को अपनी ओर तैरते आते देख नागवाहन ने उसे बाण से मारना चाहा। उसने धनुष उठाया और तीर छोड़ना चाहा। तब पशुपति ने उसे रोकते हुए कहा—"हंस को न मारो। बेकार सुंदर हँसों को मारने से तुम्हारे हाथ क्या लगेगा?"

"शिकार खेलने में मनोरंजन नहीं होता?" नागवाहन ने कहा।

"यह शिकार नहीं, हत्या है!" पशुपति ने कहा।

इसके बाद वे उधर घूम रहे थे। उन्हें चींटियों की एक बाँबी दिखायी दी। छोटी-छोटी चींटियाँ बड़ी निपुणाई से अपने घर बना रही थीं। वे सब लगातार बाँबी में जातीं और लौटती थीं! इस दृश्य को देखने में पशुपति को बड़ा आनन्द आया।

दिनकर राव

"बाँबी के भीतर देखोगे तो तुमको और मजा आयगा।" यह कहते नाग वाहन ने एक लकड़ी से चींटियों की बाँबी को तोड़ना चाहा। पशुपति ने उसके हाथ की लकड़ी को दूर फेंककर कहा—"तुम नाहक चींटियों को क्यों सताते हो?"

"तुम कहाँ से अहिंसावादी निकल पड़े? कैसे कायर हो?" नागवाहन पशुपति पर खीझ उठा।

वे दोनों थोड़ी दूर और आगे बढ़े! उन्हें पेड़ पर फूलों से पराग इकट्ठा करने वाली मधुमक्खियाँ दिखायी दीं। नागवाहन ने उन पर एक कपड़ा फेंक दिया और कुछ मधुमक्खियों को पकड़कर कहा—"ये बदमाश मधुमक्खियाँ मिल गयीं। जानते हो, इनके काटने से कैसी पीड़ा होती है? इन्हें मार भी डाले, लेकिन पाप नहीं लगता।" नागवाहन उनको मारने लगा!

पशुपति ने इस बार भी उसके हाथ का कपड़ा छीन लिया और मधुमक्खियों को उड़ने दिया तब बोला—"तुम उनको नहीं छेड़ते हो तो वे काटेंगी क्यों? ऐसे काम क्यों करते हो?"

नागवाहन को पशुपति पर गुस्सा आया और बोला—"तुम मुझे एक भी काम करने

नहीं देते हो? मेरे पसंद के काम को रोकने वाले तुम कौन होते हो? आगे मैं तुम्हारे साथ नहीं चलूंगा!" यह कहते वह घोड़े पर सवार हो तेज़ी से भाग गया। पशुपति पीछे से उसे ज़ोर-ज़ोर से पुकार रहा था, पर बेगवाहन रुके बिना चला गया।

पशुपति भी अपने भाई का पीछा करने के ख्याल से घोड़े पर सवार हो रहा था, तब उसे एक साथ तीन कंठ सुनायी पड़े—"सरकार, जरा रुकिये तो!" उसने अचरज में आकर घूमकर देखा। एक हंस, एक बड़ी चींटी और मधुमक्खियों की रानी उसके निकट आ पहुँचीं।

"तुमने हमारे प्रति जो दया दिखायी, उसके लिए हम अत्यंत कृतज्ञ हैं। तुम जहाँ भी रहो, हम से कोई काम बन पड़े, तो हमारी याद करो, हममें से जिसकी याद करोगे, वह आकर तुम्हारी मदद करेगी।" वे तीनों बोल उठीं।

पशुपति उनकी बातें सुनकर बहुत खुश हुआ। दो दिन तक जंगल में लगातार यात्रा करके वह एक बड़े महल के पास पहुँचा। उस महल के सामने एक तालाब था। उसके किनारे तीन मंदार वृक्ष थे। इनके अलावा पास में कुछ सूखे पेड़ थे। मंदार वृक्षों के समीप में एक वृद्ध बैठा हुआ था। पशुपति राजमहल के सामने घोड़े से उतर कर भीतर जाने लगा। तब बूढ़ा बोल उठा—"उधर न जाओ! उस महल में तुम्हारा कोई काम नहीं। तुम सीधे अपने रास्ते चले जाओ!"

पशुपति बूढ़े के निकट जाकर बोला—"तुम चुप क्यों बैठे हो? यह महल किसका है! तुम कौन हो?"

बूढ़े ने यों कहा—"इस महल की कहानी सुनोगे? यह एक राजा का है। उसके दो पुत्रियाँ और एक पुत्र था। दोनों पुत्रियाँ जुड़वें थीं। दोनों देखने में एक ही तरह की थीं। बड़ी लड़की का नाम सुवर्णा और छोटी लड़की का नाम मधुरवाणी था। लड़का उन दोनों से छोटा था। वे दिन प्रति दिन बढ़ने लगे। एक दिन एक राजयोगी राजमहल में भिक्षा माँगने आया। राजकुमार और राजकुमारियों ने उस योगी का मज़ाक उड़ाया। राजकुमार ने एक छोटी-सी पेटी दिखाकर उसकी चाभी तालाब में फेंक दी और पूछा—"तुम अपने योग के बल से तालाब में से चाभी ले आओ और पेटी खोलकर बताओ कि उसमें क्या है।" सुवर्णा ने मोतियों की अपनी माला तोड़कर फेंक दी और पूछा—

"इसमें कितने मीती हैं, गिनकर एक जगह इकट्ठा करो और पहले की तरह इसे माला में गूँथ दो।" मधुरवाणी ने योगी से पूछा–"तुम बताओ कि हम में बड़ी कौन है और छोटी कौन, बताओगे तो तभी हम तुमको भिक्षा देंगे।" इस पर योगी नाराज़ हो गया और तीनों को मंदार वृक्ष बन जाने का शाप दिया। वे ही ये मंदार वृक्ष हैं। राजा को जब यह बात मालूम हुई तब वह योगी के पैरों पर गिर पड़ा और बोला–"योगिराज! अज्ञानवश मेरे बच्चों ने अपराध किया है। उनको क्षमा कर शाप से मुक्त कीजिये।" तब योगी थोड़ा शांत हुआ और बोला–"इन बच्चों ने मुझसे जो सवाल पूछे, उन सवालों का जवाब कोई भी दे तो उनका शाप जाता रहेगा। जो जवाब देने का वचन देकर न दे पायगा, वह ठूँठा पेड़ बन जायगा।" यह कह कर योगी चला गया। ऐसे जो सूखे पेड़ बन गये, वे ही ये लोग हैं। इस घटना के होने के बाद राजा राज्य से विरक्त हो, राज्य का भार अपने मंत्रियों पर छोड़कर उन्हें एक दूसरी राजधानी का इंतज़ाम किया और यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो आदमी मेरी लड़कियों को फिर मनुष्य बना देगा उनके साथ उन लड़कियों का विवाह किया जायगा। एक दो युवक आगे आये, लेकिन सही जवाब न दे सकने के कारण पेड़ बनकर रह गये। कल भी एक राजकुमार आया, लेकिन अपने काम में विफल हो पेड़ बन गया। वही यह पेड़ है।"

पशुपति ने दो बातें समझ लीं। वह वृद्ध ही राजा है। कल जो पेड़ बन गया है, वही उसका भाई नागवाहन है।

पशुपति उस वृद्ध से बोला–"चाहे जो भी हो जाय, मैं भी कोशिश करूँगा।" यह कह कर, वह तालाब के पास आया और हंस की याद की। तुरंत हंस उसके

सामने आया। पशुपति ने उससे तालाब से चाभी लाने को कहा। हंस ने तालाब में से चाभी लाकर दी। पशुपति ने पेटी में से एक ताड़पत्र निकाला। उस पर लिखा था—"चमकनेवाला सब सोना नहीं होता!"

इसके बाद पशुपति ने चींटी की याद की, चींटी दूसरे क्षण उसके सामने आ खड़ी हुई।

"ज़मीन पर मोती बिखरे पड़े हैं। उन सबको ढूँढ कर मुझे ला दो।" पशुपति ने कहा। तुरंत चींटियों के दल ने आकर मोती चुनकर दिये। पशुपति ने उनको गिनकर दिया।

अब यह जानना था कि मंदार वृक्षों के रूप में स्थित राजकुमारियों में छोटी कौन है। पशुपति ने इस बार मधुमक्खी की याद की। मधुमक्खी तुरंत आ गयी। "इन दोनों मंदार वृक्षों में से छोटे पेड़ पर बैठ जाओ!" पशुपति ने मधुमक्खी से कहा। मधुमक्खी एक पेड़ पर जा बैठी।

दूसरे ही क्षण इंद्रजाल की भांति तीनों मंदार वृक्ष और सूखे पेड़ भी मानवों के रूप में दिखायी दिये। उन में नागवाहन भी था।

वृद्ध ने अपनी पुत्रियों और पुत्र को देख उन से गले लगाया और आनंद-बाष्प निकालने लगा। उसने अपनी पुत्रियों से कहा—"मेरे वचन दिये अनुसार तुम दोनों उस युवक से शादी करो।"

इस पर पशुपति बोला—"मेरा विवाह छोटी लड़की से कीजिये। बड़ी लड़की का विवाह मेरे बड़े भाई के साथ कीजिये। ये ही मेरे बड़े भाई हैं।" यह कहते पशुपति ने नागवाहन का राजा को परिचय कराया।

वृद्ध राजा ने खुश होकर अपनी पुत्रियों का विवाह उन दोनों राजकुमारों के साथ किया। नागवाहन और पशुपति अपना देशाटन समाप्त कर अपनी पत्नियों के साथ अपने राज्य में लौटे।

हार-जीत

एक गाँव में एक किसान के दो बेटे थे। वह गाँव शहर से काफ़ी दूर था। एक पहाड़ का चक्कर काटते जंगल से होकर वहाँ जाना पड़ता था। इसलिए किसान शहर से अपने लिए आवश्यक चीज़ें तीन-चार महीनों में एक बार एक साथ लाया करता था। अक्सर यह काम उसके लड़के ही किया करते थे।

एक बार शहर से इसी प्रकार ज़रूरी चीज़ें मंगानी पड़ी। किसान ने अपने लड़कों के हाथ पाँच सौ रुपये देकर शहर भेजते हुए कहा—"सुनते हैं, जंगल के रास्ते में आजकल चोर-डाकुओं का उपद्रव बढ़ गया है। इसलिए तुम लोग बड़ी होशियारी से जाओ। अपने साथ मज़बूत लाठियाँ लेते जाओ। अंधेरा होने के पहले ही गाँव लौटो! जंगल के रास्ते में दोनों कभी एक दूसरे से दूर न चलो।"

"चोर हमारा क्या बिगाड़ेंगे! हमारे पास आवे तो उनकी खोपड़ियाँ उधेड़ देंगे।" अपने पिता से दोनों लड़के डींग हाँककर रवाना हुए। उनकी हिम्मत का कारण यह था कि चोरों के संबंध में जो अफ़वाहें उड़ी थीं, वे सच न थीं।

जब वे दोनों पहाड़ के नुक्कड़ में जंगल से होकर जाने लगे तब चार चोर पेड़ों की आड़ में से आये और उनको घेरकर गरज उठें—"तुम लोगों के पास जो कुछ धन है, देते जाओ! नहीं तो तुम्हारे सर फोड़ देंगे।"

वे चोर नक़ाब डाले राक्षसों के जैसे दीख रहे थे। उनके कंठ मेघ की तरह गरज रहे थे। किसान के बेटे उनको देख थर-थर कांपने लगे। उनके पास रुपये की जो थैली थी, वह नीचे गिर पड़ी।

"अब तुम दोनों भाग जाओ!" यह कहते चोरों ने लाठियाँ उठायीं। उन

सुशीला कुमारी

दोनों ने न आव देखा, और न ताव! लगे दौंड़ने। भागते-भागते घर पहुँचे।

दोनों ने घर पहुँच कर सारी कहानी अपने पिता को सुनायी—"हमने सोचा था कि चोर भी आदमी होते हैं। लेकिन जानते हैं, वे कैसे भयंकर हैं। उनके कंठ, उनकी आँखें, उनकी लाठियाँ! कैसे भयंकर हैं! बाप रे, बाप! क्या बतावें! जान हो तो जहान है! यही सोचकर जान बचाकर दौड़े आये।

किसान ने अपने बेटों की बातें सुनकर क्रोध से कांपते हुए कहा—"कायर कहीं के! तुम दोनों डरपोक हो! एक दो-दो आदमियों के बराबर खाना खाते हो। चोरों का सामना नहीं कर सके! तुमको कैसे मालूम हुआ कि उनकी लाठियाँ तुम्हारी लाठियों से ज्यादा मजबूत हैं! मेरे कंठ से भी उनके कंठ भयंकर हैं। मेरी आँखों से भी उनकी आँखें ज्यादा आग की तरह जलती हैं? चोरों को दीखते ही उन पर शेर की भांति कूदकर मारने से दूर रहा, जान बचाकर भाग आये हो और खुश हो रहे हो? छी! तुम्हारे चेहरे देखने से मुझे पाप लगेगा! जब तक चोरों से तुम वे पाँच सौ रुपये छीनकर न लाओगे, तब तक मेरे सामने न आओ!" पिता उनको डांटने लगा।

दोनों भाई सर झुकाये बाहर आये। अब उनको ऐसा मालूम होने लगा कि चोरों को देख डरना लज्जा की बात है। पिता से डांट खाना और शर्म की बात है। इससे उनका पौरुष जाग उठा।

"छी! हमने गलती की। यह बात भूल ही गये कि आखिर चोर भी आदमी होता है। चोरों को हराकर ही हमें घर लौटना है।" दोनों भाइयों ने फ़ैसला किया। लेकिन चोरों को जीतने का उपाय क्या है? कांटे को कांटे से ही निकाला

जा सकता है। उन्हें भी चोर बनना है। यही निर्णय किया दोनों ने। दोनों दाढ़ी व मूँछें बढ़ायीं। चेहरे पर कालिख पोतकर भयंकर रूप बनाये। दोनों अपने अपने हाथ में लाठी, कटार व रस्सा लेकर जंगल के रास्ते में ताक में बैठे रहें।

थोड़ी देर बाद एक आदमी उधर से आ निकला। एक पेड़ की आड़ में खड़ा हो गया। दोनों भाइयों ने आपस में सलाह-मशविरा किया। दोनों तरफ़ छिपकर उस पेड़ के पास पहुँचे और अचानक उस पर टूट पड़े। अपनी लाठियाँ उठाकर गरज उठे–"तुम्हारे पास जो कुछ है, वहाँ पर रखो, नहीं तो मार डालेंगे।"

वह आदमी चकित होकर बोला–"तुम लोग कौन हो? चोर तो नहीं? मुझे क्या समझते हो? मैं भी चोर हूँ। अपने दल का नेता हूँ। तुम नये चोर मालूम होते हो! यहाँ पर मैंने तुम दोनों को इसके पहले नहीं देखा। नये हों तो हम सब मिलकर चोरी करेंगे। हमारे साथ तुम लोग भी अपना हिस्सा बराबर बांट सकते हो!"

"हम पड़ोसी गाँव के हैं! तुम लोगों से मिलने पर हमारा क्या फ़ायदा होगा? तुम लोग कितना कमाते हो?" दोनों भाइयों ने चोरों के सरदार से पूछा।
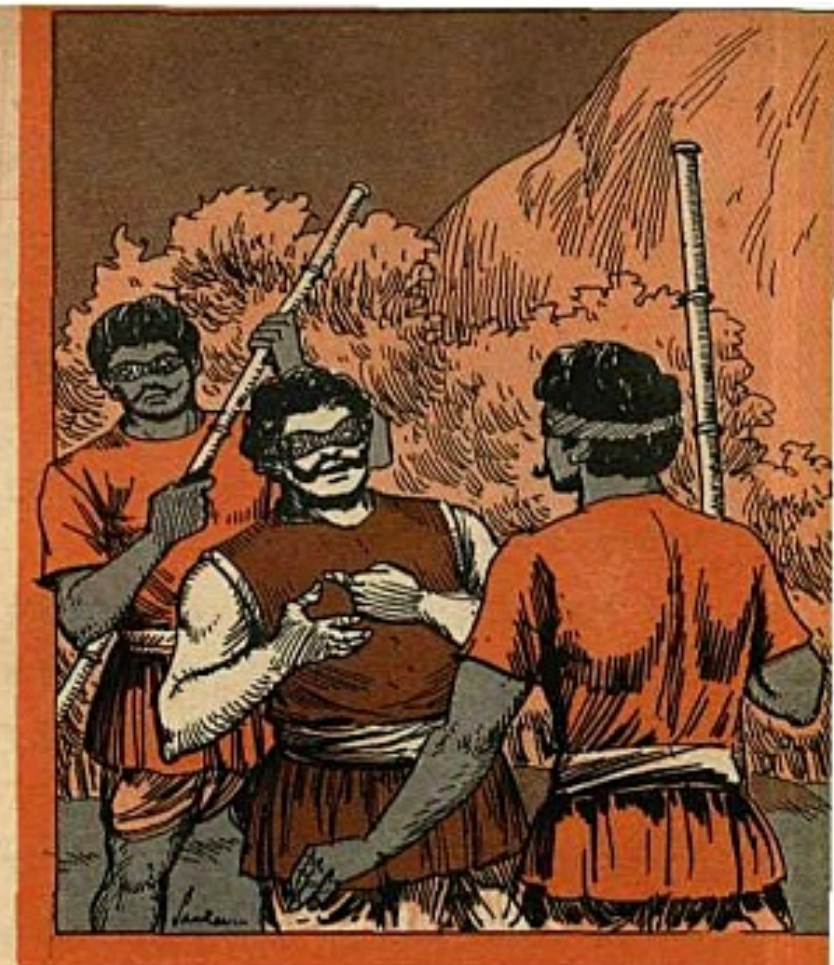
"यह जगह अच्छी मालूम नहीं होती। आठ दिन के अंदर हमने सिर्फ़ दो चोरियाँ की हैं। इससे भी कहीं अच्छी जगह जायेंगे! हम कुल छे आदमी हैं। तुम दोनों मिल जाओगे तो आठ आदमी होंगे; एक एक को आठवाँ हिस्सा मिलेगा। क्या हममें मिल जाने को तैयार हो?" चोरों के सरदार ने पूछा।

"तुम छे आदमी मिलकर हम दोनों को दगा दे तो क्या होगा? पहले हमें थोड़े

रुपये अग्रिम दो। तब तुम्हारी बात मान लेंगे।" दोनों भाइयों ने कहा।

"अच्छी बात है! दो दिन पहले हमने दो जवानों से पाँच सौ रुपये लूट लिये हैं। वे रुपये तुम दोनों ले लो।" चोरों के सरदार ने कहा।

"बस, पाँच सौ रुपये? दे दो, बड़ी रक़म हम लूटकर देंगे!" यह कहकर दोनों भाइयों ने पाँच सौ रुपये लिये और उसके साथ गुप्त प्रदेश में चले गये।

वहाँ के बाकी चोरों के साथ चोरों के सरदार ने नये चोरों का परिचय कराया। इसके बाद उन दोनों ने चोरों के सरदार से कहा–"अब तुम हमारे साथ चलो! हम अपना गुप्त प्रदेश भी तुमको दिखा देंगे!"

नये चोरों का गुप्त प्रदेश देखने बाक़ी चोर भी जाने लगे। तब दोनों भाइयों ने उनको रोकते हुए कहा–"हम सब जल्दी नयी जगह जा रहे हैं। हमने जो कुछ छिपाया, सब यहीं पर ले आते हैं। सिर्फ़ हमारे सरदार को साथ भेज दो।"

"हम अभी आ जाते हैं। कहीं न जाना!" चोरों के सरदार ने उनको ताक़ीद की और उन भाइयों के साथ रवाना हुआ।

तीनों जंगल से होकर थोड़ी दूर चलते रहे, फिर अचानक दोनों भाई चोरों के सरदार पर टूट पड़े और उसके हथियार छीन लिया। उसको रस्सियों से कसकर बांध दिया और उसके मुँह में कपड़े ठूँस दिये। उसको अपने गाँव ले जाकर राजभटों के हाथ सौंप दिया।

राजभटों ने उन दो भाइयों की मदद से चोरों के गुप्त प्रदेश का पता लगाया और बाक़ी चोरों को भी क़ैद किया।

अपने बेटों की बहादुरी पर बाप बहुत खुश हुआ। राजा ने उन दो भाइयों को खूब इनाम देकर उनका सम्मान किया।
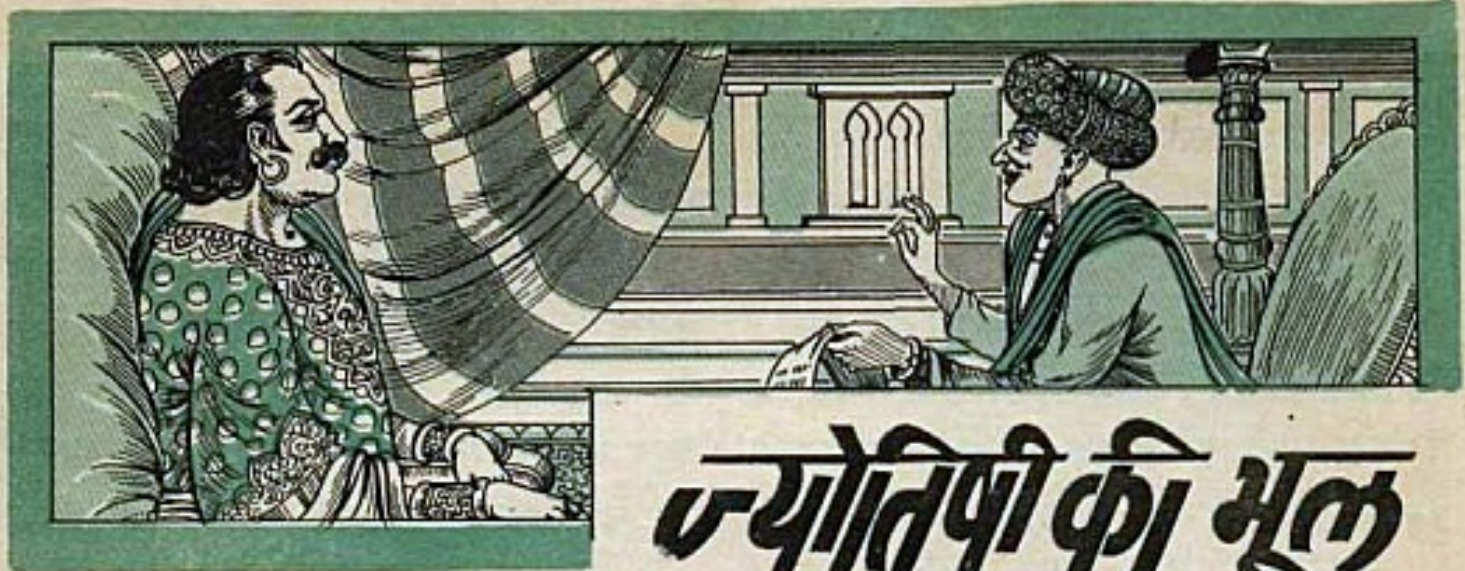
ज्योतिषी की भूल

मंगलापुर के राजा के बहुत समय बाद एक पुत्र पैदा हुआ। दरबारी ज्योतिषी विष्णु शर्मा एक विख्यात ज्योतिषी था। उसने पहले ही बताया था कि अमुक समय में राजा के संतान होगी। उसकी भविष्यवाणी सत्य साबित हुई।

जिस दिन रानी ने एक पुत्र का जन्म दिया, उसी दिन विष्णु शर्मा की पत्नी के भी एक लड़का हुआ। राजकुमार और विष्णुशर्मा के लड़के की जन्म-पत्री में ज़रा भी अंतर न था।

विष्णुशर्मा ने राजकुमार की जन्मकुंडली बनाकर उसका फल बताया। उसके अनुसार राजकुमार दीर्घकाल तक स्वस्थ रहकर राज्य पर शासन करेगा।

"सुनते हैं, तुम्हारे भी एक पुत्र हुआ है। उसकी जन्मकुंडली कैसी है?" राजा ने विष्णुशर्मा से पूछा।

"उसकी जन्मकुंडली भी अच्छी है। उसमें मुझे कोई ख़राबी दिखायी नहीं देती।" विष्णुशर्मा ने कहा।

असली बात यह है कि विष्णुशर्मा के पुत्र की जन्मकुंडली में राजयोग है। उसका भी जन्म राजकुमार के लग्न में हुआ था। ग्रहों के वे ही स्थान हैं। विष्णुशर्मा ने यह बात नहीं बतायी क्योंकि राजयोग की बात कहने से शायद ईर्ष्यावश राजा उसके पुत्र की हानि करेगा!

दिन बीतते गये। राजकुमार और विष्णुशर्मा का पुत्र बढ़ने लगे। लेकिन विष्णुशर्मा का पुत्र उसके सोचने के अनुसार योग्य नहीं बना। जिस दिन राजकुमार का पट्टाभिषेक होनेवाला था, उस दिन वह अपने माता-पिता से झगड़ा कर घर के सारे रुपये लेकर कहीं भाग गया।

महेश कुमार

विष्णुशर्मा की समझ में न आया कि उसके लड़के की यह हालत क्यों हो गयी! उसके सभी विचार उलटे हो गये हैं। ज्योतिष्य पर से उसका विश्वास उठ गया। एक दिन रात को उसने अपने सभी ज्योतिष संबंधी ग्रन्थों को इकट्ठा किया और उनको जलाने के लिए गाँव के बाहर चला गया।

एक निर्जन प्रदेश में विष्णुशर्मा ज्योतिष ग्रन्थों को जलाने जा रहा था। तब एक बूढ़ा उसके पास आ पहुँचा और पूछा— "तुम यह क्या करने जा रहे हो? लगता है, कोई भयंकर काम करने जा रहे हो?"

विष्णुशर्मा ने बूढ़े से अपने पुत्र के बारे में सारी बातें बतायीं।

"यह बताओ कि तुम्हारे पुत्र को राजयोग दिलानेवाला ग्रह इस समय कहाँ पर है?" बूढ़े ने पूछा। विष्णुशर्मा ने ज़रा सोचते हुए कहा—"मंगल ग्रह है! पर वह मेरे घर से चला गया है।"

"तो फिर क्या हुआ? तुम्हारे पुत्र की जन्मकुंडली तुम जैसे सोचते हो, वैसे ही होगा। तुम्हारा पुत्र तुम्हारी कल्पना के अनुसार आज्ञाकारी हो, बढ़ता जायगा तो वह राजा कैसे बनेगा? तुम्हारे घर रहने से उसे राजयोग कैसे प्राप्त होगा? यह बताओ कि तुमको राज-पिता बनने का योग प्राप्त है?" बूढ़े ने शर्मा से पूछा।

विष्णुशर्मा समझ गया कि वह बूढ़ा आदमी ही मंगल है। वह उस बूढ़े के पैरों पर गिरकर प्रार्थना करने लगा— "मुझे क्षमा करो! मेरे आज्ञान को दूर करो। मंगलदेव!"

विष्णुशर्मा ने सर उठाकर देखा तो बूढ़े का वहाँ पता न था। वह अपने सभी ग्रन्थों को लेकर घर पहुँचा। फिर पहले की तरह ग्रहों की पूजा करते दिन बिताने लगा।
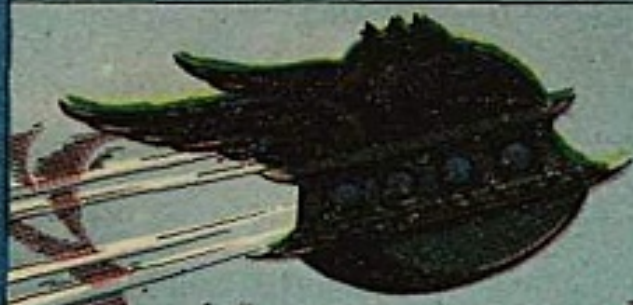
शिशुपाल के साल्व नामक एक मित्र था। कृष्ण जब रुक्मिणी को उठा ले जा रहे थे, तब कई लोगों ने उनका सामना किया, पर सब हार गये। उन में साल्व भी एक था। इसलिए वह क्रोध में आया और उसने शपथ खायी कि दुनिया में यादव वंश का नामोनिशान तक मिटा दूंगा। इस वास्ते वह केवल मिट्टी खाते शिवजी के प्रति घोर तपस्या करने लगा। शिवजी जब प्रत्यक्ष हुए तब साल्व ने उनसे यह वर मांगा कि वे ऐसा विमान उसे प्रदान करे, जिसका कोई कुछ बिगाड़ न सके। शिवजी का आदेश पाकर विश्वकर्म ने लोहे का एक काला विमान बनाकर दिया। सौभ नामक उस विमान पर चढ़कर साल्व ने द्वारका पर हमला किया। उसकी सेनाओं ने भी द्वारका को घेर लिया।

साल्व ने विमान से पत्थर, पेड़ और हथियार द्वारका पर गिराकर बीभत्स बनाया। उसकी सेनाएँ नगर के प्राकार, दर्वाज़े तथा बगीचों को ध्वस्त करने लगीं। उस दारुण हमले को रोकने के लिए प्रध्युम्न सात्यकी, चारुदेष्ण, सांबु, अक्रूर, कृतवर्मा इत्यादि योद्धाओं को साथ ले, अपनी सेना समेत साल्व पर चढ़ाई कर बैठे। उस समय कृष्ण पांडवों के यहाँ ही थे।

साल्व की सेनाओं तथा यादवों के बीच सत्ताईस दिन तक भीषण संग्राम होता

२९. सुदामा की कहानी

रहा। उस समय कृष्ण ने द्वारका लौटते हुए युद्ध का समाचार सुना और सीधे अपने रथ को साल्व पर आक्रमण करने बढ़ाया। दोनों के बीच भीकर युद्ध हुआ। कृष्ण ने सौभ विमान को तोड़कर उसे समुद्र में गिरा दिया और चक्रायुध का प्रयोग कर साल्व को मार डाला।

साल्व के मरते ही उसका मित्र दंतवक्तृ एक गदा लेकर अकेले कृष्ण पर टूट पड़ा। कृष्ण दंतवक्तृ के फुफेरा भाई थे। कृष्ण ने भी गदा लेकर युद्ध करते, उसकी छाती में दे मारा और उसे मार डाला। इससे साल्व के साथ लड़ाई खतम हुई...

कृष्ण के सुदामा नामक बचपन का एक मित्र था। वह कुचेल नाम से भी मशहूर था। दोनों ने एक ही गुरु के यहाँ शिक्षा पायी थी। सुदामा बड़े होने पर विवाह करके गृहस्थ जीवन बिताते गरीबी में नाना प्रकार के कष्ट झेल रहा था। सुदामा से भी उसकी पत्नी को गरीबी खटकने लगी थी। इसलिए एक बार उसने अपने पति से कहा था—"कृष्ण आपके मित्र हैं; मैं ने सुना है कि वे ब्राह्मणों को हृदय खोल कर दान दिया करते हैं। शरण में गये हुए लोगों की सहायता करते हैं। ऐसी हालत में आप तो मित्र हैं और गृहस्थी के भार से दबे हुए हैं। यह बात मालूम होने पर वे जरूर आप की मदद करेंगे।"

सुदामा के मन में भी मदद मांगने के बहाने एक बार कृष्ण के दर्शन करने की इच्छा हुई। वह जानता था कि उनके दर्शन करने जाने पर जरूर फ़ायदा होगा! यह सोचकर उसने अपनी पत्नी से कहा—"मैं कृष्ण को देखने ज़रूर जाऊँगा, मगर खाली हाथ जाने के बदले कुछ भेंट ले जाना उचित होगा! कोई चीज़ है?"

सुदामा की पत्नी अड़ोस-पड़ोसवालों से चार मुट्ठियाँ चूड़े मांग लायी और एक

छोटे से कपड़े में बांध कर पति के हाथ दी। चूड़ों की वह पोटली लिये सुदामा द्वारका के लिए चल पड़ा, आखिर कृष्ण का घर ढूँढ़ते वहाँ पहुँचा।

कृष्ण चारपाई पर लेटे हुये थे। सुदामा को देखते ही उठकर सामने आये और उससे गले लगाया। फिर सादर उसको ले जाकर अपनी चारपाई पर बिठाया। स्वयं उन्होंने सुदामा के पैर धोये। उस पानी को अपने सर पर छिड़काये। इसके बाद सुदामा के शरीर पर चन्दन मल कर उसके गले में फूल-माला पहनायी। इस प्रकार सुदामा का देवता के समान सत्कार किया। सुदामा के शरीर पर धूल जमी थी, कपड़े फटे थे और कंकाल जैसे दीखनेवाले उस ब्राह्मण के प्रति अपने पति का सत्कार देख रुक्मिणी चँवर ले आयी और झलने लगी। कृष्ण का सुदामा के प्रति आदर भाव देख वहाँ के लोग चकित थे!

सुदामा का उचित आदर-सत्कार करने के बाद वे दोनों गुरुकुल के अपने अनुभवों की याद करने लगे।

गुरुकुल में रहते समय एक बार गुरुपत्नी ने उनको समिधा लाने भेज दिया था। वे एक भयंकर जंगल में पहुँचे। इतने में ज़ोर की आंधी और वर्षा शुरू हुई। आसमान में बिजली कड़कने लगी। बादल गरजने लगे, बिजली भी गिरी। इतने में शाम हो गयी। समिधाओं की खोज में जाकर वे भीग गये। रास्ता बिलकुल दिखायी न दे रहा था। सब जगह पानी ही पानी था। एक दूसरे का हाथ पकड़े वे दोनों रात-भर जंगल में भटकते रहें। आखिर सेवेरा हुआ। उनका गुरु सांदीपनि को मालूम हो गया कि उनके दोनों शिष्य जंगल में कहीं फँस गये हैं। वे घबरा गये। उनको ढूंढ़ते जंगल में देखा
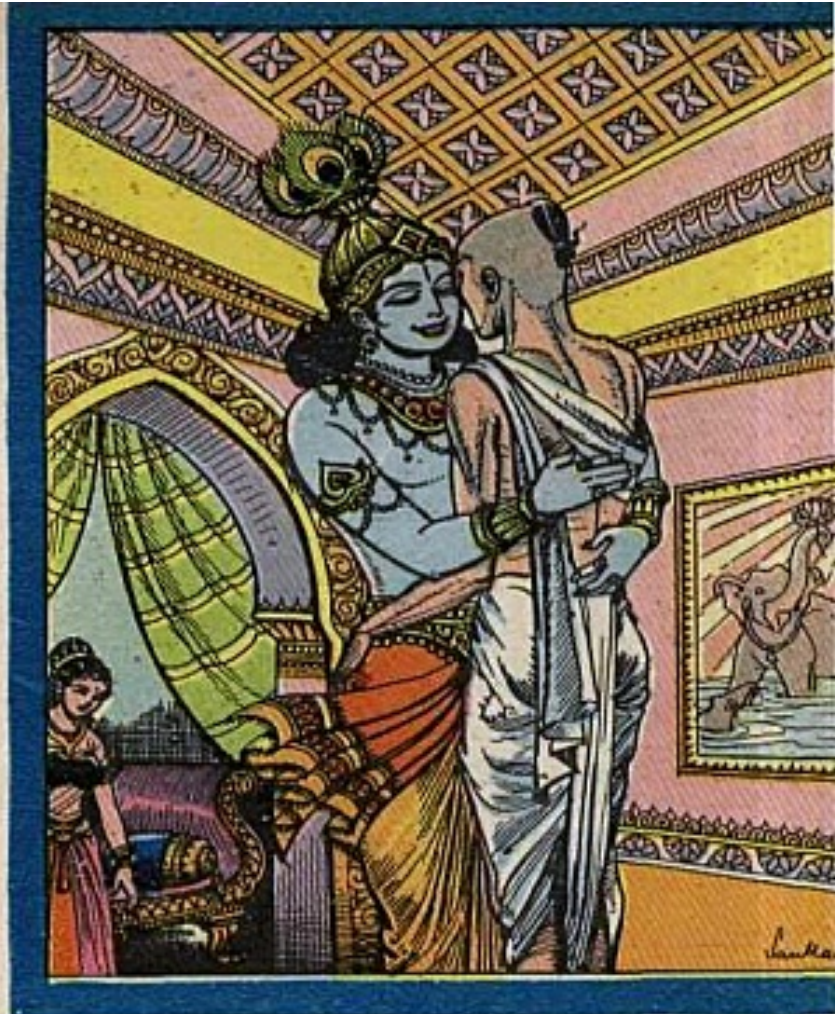
कि वे बड़ी बुरी हालत में हैं। इस पर गुरु ने उन पर प्रसन्न होकर कहा था—"हमारे वास्ते तुम दोनों ने बड़ी तक़लीफ़ें झेलीं। इससे बढ़कर अच्छे शिष्य अपने गुरु के प्रति और क्या कर सकते हैं? तुम्हारी भक्ति पर मैं प्रसन्न हूँ। तुम लोगों की इच्छाएँ अवश्य पूरी हो जायंगी!" ये शब्द कहते गुरु ने उनको आशीर्वाद दिये। यह घटना कृष्ण ने सुदामा को याद दिलाकर पूछा—"आपको स्मरण है?"

"आप से मित्रता करनेवाले मुझ जैसे व्यक्ति की कौन इच्छा पूरी न होगी?" सुदामा ने कहा। इस पर कृष्ण ने हँसते हुए पूछा—"यह बताइये कि मेरे लिए घर से क्या लाये हैं?"

सुदामा घबरा गया। कृष्ण को चूड़े देने में उसे संकोच होने लगा। कृष्ण ने ही ज़बर्दस्ती सुदामा के हाथ से चिथड़ोंवाली पोटली लेकर पूछा—"इसमें क्या है?" फिर पोटली खोलकर बोले—"अरे चूड़े हैं! जानते हैं, ये मेरे लिए कैसे प्यारे हैं?" इसके बाद कृष्ण ने एक मुट्ठी मुँह में डाली और दूसरी मुट्ठी भर ली।

"जो खाया, पर्याप्त है।" यह कहते रुक्मिणी ने कृष्ण का हाथ पकड़ा।

उस रात को सुदामा ने कृष्ण के घर पर ही स्नान-भोजन करके सुख की नींद ली और सोचा कि वह सचमुच स्वर्ग में है।

दूसरे दिन सुदामा जब अपने गाँव लौटने लगा, तब कृष्ण ने थोड़ी दूर तक साथ चलकर उसे विदा किया। कृष्ण ने सुदामा के हाथ धन या कोई उपहार नहीं दिया। सुदामा चलते-चलते मन में सोचने लगा—"कृष्ण तो महाराज हैं। मैं एक दीन दरिद्र ब्राह्मण हूँ। ब्राह्मण समझ कर ही कृष्ण ने आदर के साथ मुझसे गले लगाया। अपने भाई जैसा मेरे साथ व्यवहार किया। अपनी पत्नी की चारपाई पर मुझे बिठाया। अपनी

पत्नी के हाथ चँवर डुलवाया। देवता के साथ जैसा आदर किया जाता है, वैसा आदर किया। शायद यह सोचकर मुझे धन नहीं दिया कि संपत्ति के मिलने से मैं घमण्ड़ी होकर उनको भूल जाऊँगा।"

लेकिन ज्योंही सुदामा अपने घर की ओर बढ़ा त्योंही उसकी आँखों को चौंधियाने वाले राजमहल उसे दिखायी दिये। उद्यान और सरोवर दिखाई पड़े। उनमें तरह-तरह के पक्षी, कमल और कुमुद शोभायमान थे। भवन में सब जगह दास-दासियाँ घूम रही हैं।

"यह किसका घर होगा? मेरा तो नहीं हो सकता। यह सब यहाँ पर आया कैसे?" यह सोचते सुदामा चकित ही था, देवता जैसे स्त्री-पुरुष गाजे-बाजों के साथ उसकी अगवानी करने आये और उसको उस राजमहल में ले गये।

वेष बदली हुई लक्ष्मी जैसी दीखनेवाली सुदामा की पत्नी अपने पति के सामने आयी, उमड़ने वाले आनंद-बाष्पों को रोकने का प्रयत्न करते उसने सुदामा को नमस्कार किया और मन ही मन अपने पति का आलिंगन किया।

यह सब वैभव देख सुदामा ने अपने मन में सोचा—"यह सारा वैभव कृष्ण के

दर्शन के कारण ही मुझे प्राप्त हुआ है। दूसरा कोई कारण नहीं हो सकता। मित्र हों तो ऐसे हों। उन्होंने मुझसे हल्की वस्तु ली, पर उसे वे महान मानते हैं। वे जो महान वैभव देते हैं, उसे छोटा मानते हैं।"

इसके बाद सुदामा अपनी पत्नी और बच्चों के साथ सुखपूर्वक जीवन बिताने लगे।

एक बार पूर्ण सूर्यग्रहण पड़ा। उस वक़्त यादव सब अनिरुद्ध पर द्वारका नगर की रक्षा का भार सौंपकर, कुरुक्षेत्र गये। वहाँ पर कृष्ण के सब पुराने रिश्तेदारों के दर्शन हुए। नंद और यशोदा भी आये। कुंती भी आयीं। भीष्म, द्रोण, धृतराष्ट्र,
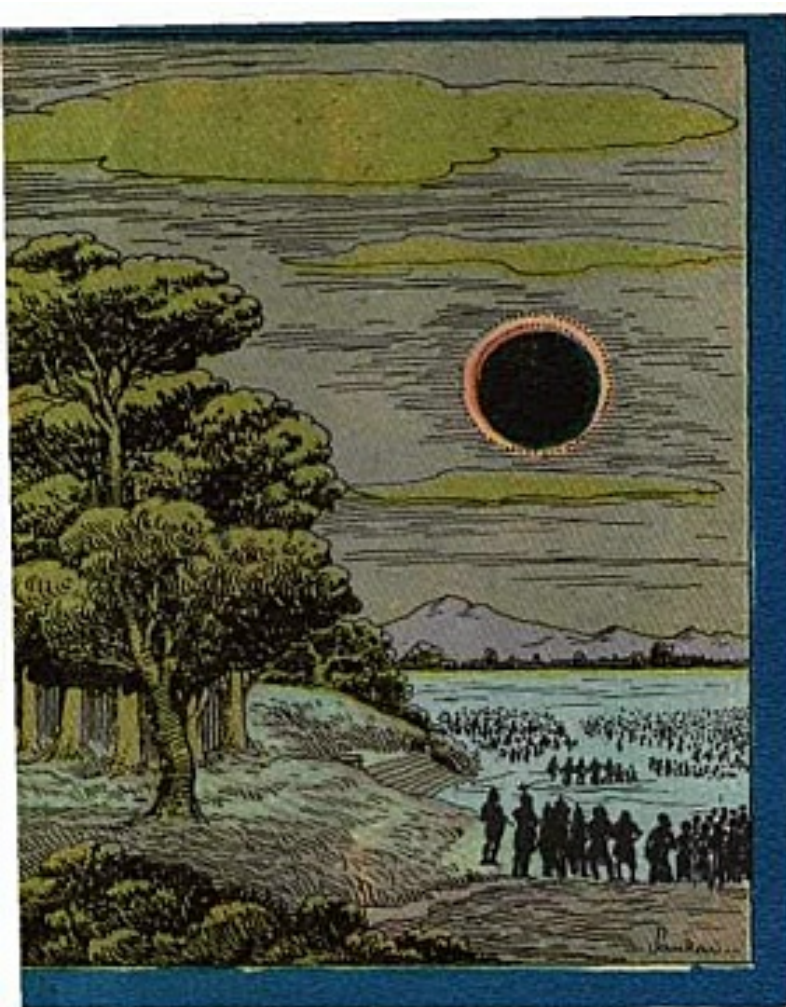
संजय, विदुर, कृपाचार्य, दुर्योधन इत्यादि आये, साथ ही गांधारी, पांडव, उनकी पत्नियाँ, सब बहुत समय बाद एक स्थान पर मिले। सब ने परस्पर सुख-दुख की बातें कीं।

उस समय पांडवों की पत्नी द्रौपदी ने कृष्ण की अष्ट महिषियों से पूछा–"आपके विवाह कृष्ण के साथ कैसे हुए हैं?"

रुक्मिणी ने पहले अपने विवाह का वृत्तांत सुनाया–"जरासंध आदि ने मेरा विवाह शिशुपाल के साथ करने का निश्चय किया, तब कृष्ण ने आकर सबको धूल चटवा दी और मुझे उठा ले जाकर मेरे साथ विवाह किया।"

इसके बाद सत्यभामा ने अपने विवाह की कहानी सुनायी–"मेरे पिता सत्राजित मेरा विवाह शिशुपाल के साथ करना चाहते थे, इस बीच में मेरे चाचा का देहांत हो गया। मेरे पिता ने उनकी मृत्यु का दोषारोपण कृष्ण पर किया। तब कृष्ण ने मेरे चाचा को मारनेवाले सिंह का वध किया और श्यमंतक मणि को उठा ले गये हुए जांबवान को हरा कर, उसे पिता को सौंप दिया और मेरे साथ शादी की।"

"मेरे पिता जांबवान ने पच्चीस दिन तक कृष्ण के साथ युद्ध किया, तब उन्हें मालूम हुआ कि उस काल के रामचन्द्र ही इन कृष्ण के रूप में अवतरित हुए हैं। यह मालूम होते ही उन्होंने कृष्ण के चरण पकड़े और श्यमंतक मणि के साथ मुझे भी कृष्ण के हाथों में सौंप दिया।" जांबवती ने अपने विवाह की कथा सुनायी।

तदनंतर कालिंदी ने अपनी कहानी सुनायी–"यह समझ कर कि मैंने कृष्ण को पाने की तपस्या की है, अर्जुन को साथ लेकर वे मेरे पास आये और इस तरह कृष्ण ने मुझसे परिणय किया।"

"मेरे स्वयंवर में अनेक राजा भाग लेने आये थे। कृष्ण ने उन सब राजाओं तथा

मेरे भाइयों को भी पराजित कर मेरा पाणिग्रहण किया।" भद्रा ने अपने विवाह की कथा कही!

अब नीला की बारी आयी। उसने कहा—"मेरे पिता ने यह घोषणा की थी कि जो वीर सात सांड़ों को हरा देंगे, उनके साथ मेरा विवाह करेंगे। कृष्ण ने उनको बकरियों की तरह मार गिराकर मेरे साथ विवाह किया।"

"कृष्ण मेरे ममेरे भाई हैं। मेरे पिता को जब यह समाचार मालूम हुआ कि मैं कृष्ण के साथ विवाह करने की इच्छा रखती हूँ, तब उनके साथ मेरी शादी की।" मित्रविंदा ने कहा।

अंत में लक्षणा ने अपना वृत्तांत यों सुनाया—

"आप के पिता की तरह मेरे पिता बृहत्सेन ने एक मत्स्य यंत्र का प्रबंध कर यह घोषणा की, जो वीर उसे गिरा देंगे, उनके साथ मेरी शादी करेंगे। पर खूबी यह है कि आप के पिता ने जिस मत्स्य यंत्र का प्रबंध किया, वह बाहर तो नहीं दीखता था, किंतु भीतर से दिखायी देता था। किंतु मेरे पिता ने जिस मत्स्य यंत्र का इंतज़ाम किया, वह बाहर-भीतर भी दीखता न था, बल्कि पानी में भी उसका प्रतिबिंब अस्पष्ट दिखायी देता था। उसे गिराने के लिए मेरे पिता ने जिस धनुष का प्रबंध कर रखा था, उसे कई राजा उठा भी नहीं सके। जरासंध, शिशुपाल, भीम, दुर्योधन और कर्ण ने तो धनुष उठाया, मगर वे पानी में प्रतिबिंब को पहचान नहीं पाये। तब कृष्ण ने आकर धनुष उठाया, बाण चढ़ाकर मत्स्य यंत्र को गिराया और मेरे साथ विवाह किया।"

ये सब कहानियाँ सुनकर द्रौपदी के साथ कई स्त्रियों को अपूर्व आनन्द आया।
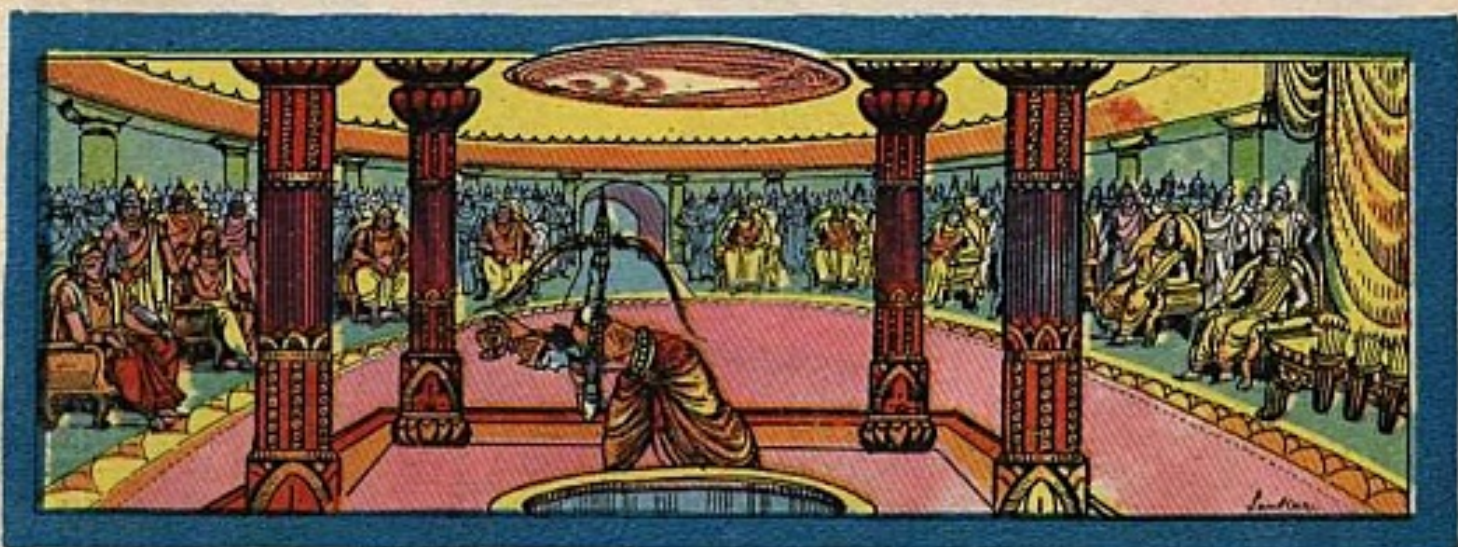
[३२]

मौवली यह बात भूल गया कि वह जंगल में नहीं है और सीधे सामने दिखायी देनेवाले दिये की रोशनी की ओर बढ़ा। तीन-चार कुत्ते एक साथ भूंकने लगे। मौवली झट बैठ गया और भेढ़िये की तरह गुर्राने लगा। उस गुर्राहट को सुनकर कुत्ते मौन हो गये।

मौवली सोचने लगा–"मैं मानवों की भीड़ वाले इस प्रदेश में आखिर आया ही क्यों?" पिछली बार जब उसने मानवों की भीड़ पर एक पत्थरों फेंका था, तब वह उसके मुँह पर ही लगा था।

झोंपड़ी का दर्वाज़ा खुल गया। बाहर अंधेरे में झांकते एक औरत दर्वाज़े पर आ खड़ी हुई। भीतर कोई बच्चा रो रहा था। उस औरत ने पीछे लौटकर कहा–"सो जाओ, बेटा! किसी सियार को देख कुत्ते भूंक रहे हैं।"

घास में छिपा मौवली थर थर कांप उठा। वह कंठ उसका परिचित सा लगा। अचानक उसके मुँह से मानव की बोली फूट पड़ी। वह धीरे से पुकार उठा–"मेस्सुवा! मेस्सुवा!"

"कौन वह बुलानेवाला?" उस औरत ने कांपने वाले कंठ से पूछा।

"क्या मुझे भूल गयी हो?" मौवली ने कहा। लगा कि मानों उसका गला सूख गया हो।

उसने दर्वाज़ा आधा बंद कर, एक हाथ अपनी छाती पर दबाये हुए पूछा–"तुम ही हो तो बताओ, मैंने तुम्हारा क्या नाम दिया है?"

"नथुआ! हे नथुआ!" मौवली बोला।

"आओ, बेटा! अन्दर आ जाओ!" मेस्सुवा ने कहा।

अन्तिम पृष्ठ

मौवली ने झोंपड़ी में क़दम रखते मेस्सुवा को अपाद मस्तक निहारा। उसने उसपर अपार प्रेम दर्शाया था। उसने उस औरत को एक बार बचाया था। लेकिन अब उसके बाल सफ़ेद हो रहे हैं। तो भी उसकी आँखों और कंठ में कोई परिवर्तन नहीं है।

उस औरत ने भी कभी नहीं सोचा था कि मौवली में भी कोई परिवर्तन होगा। औरत ने मौवली को नख-शिखपर्यंत देखा। उसका सर अब दर्वाज़े के बराबर है। वह ऊँचाई के साथ, मोटा-ताज़ा और देखने में भी सुंदर है। उसके काले बाल कंधे पर उलझ रहे हैं। गले पर उसकी कटार लटक रही है। सर के चारों तरफ़ फूलों की माला पड़ी है। देखने में वह कोई वन-देव-सा लग रहा है।

चारपाई पर लेटा हुआ बच्चा जाग पड़ा और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। मेस्सुवा उसे समझा-बुझाकर शांत करने लगी। मौवली झोंपड़ी में बिखरे मानवों के बर्तन और अन्य वस्तुओं को बड़ी उत्सुकता से देखने लगा।

"बेटा, कुछ खाओ, पिओ तो। यह सब तुम्हारा ही है। तुमने हमारी जान बचायी थी। मैंने नथुआ नाम तुमको ही दिया था? या नहीं तो तुम कोई देव तो नहीं?" मेस्सुवा ने कहा।

"मैं नथुआ ही हूँ। मैं अपनी जगह से बड़ी दूर आ गया हूँ। रोशनी दिखायी पड़ी तो पास आया। मुझे मालूम न था कि तुम यहाँ पर हो?" मौवली ने कहा।

"हम जब खान्हिवारा में आये, तब अंग्रेज़ वालों ने बताया कि हमारे प्रति न्याय करेंगे। हमको गाँववालों ने ज़िंदा जलाना चाहा। याद है न तुमको?" मेस्सुवा ने पूछा।

"मैं कैसे भूल सकता हूँ?" मौवली ने कहा।

“गोरे लोग क़ानूनी क़िताबें शोध कर, उन दुष्टों को सज़ा देने आये, लेकिन वह गाँव ही न था।” मेस्सुआ बोली।

“यह बात भी मुझे याद है।” मौवली ने कहा।

“इसलिए मेरे घरवालों ने खेतों में काम करके, बड़ी मेहनत से थोड़ी ज़मीन कमा ली। यह ज़मीन उस गाँव की जैसी अच्छी ज़मीन तो नहीं, फिर भी हमें कितना खाना चाहिये? आखिर दो प्राणी हैं।” मेस्सुआ ने कहा।

“वे कहाँ हैं?” मौवली ने पूछा।

“वे मर गये हैं। साल-भर हो गया।” मेस्सुआ की आँखों में आँसू आये।

“यह कौन?” मौवली ने लड़के की ओर इशारा किया।

“यह मेरा बेटा है। दो साल पहले पैदा हुआ है। अगर तुम वन देव हो तो तुम्हारे लोगों से इसकी रक्षा करने का आशीर्वाद दो।” यह कहते मेस्सुआ ने अपने लड़के को गोद में लिया। लड़का डर गया और मौवली के गले में चमकने वाली कटार को पकड़ने लगा। मौवली ने उसकी नन्हीं उंगलियों को हटा दिया।

“अगर शेर उठा ले गये मेरे नथुवे ही तुम हो तो यह तुम्हारा छोटा भाई है।

बड़े भाई के रूप में इसे आशीर्वाद दो।” लड़के को मौवली के हाथ देते मेस्सुआ बोली।

“भगवन! आशीर्वाद दूं? मुझे आशीर्वाद देना क्या मालूम? मैं देव भी नहीं हूँ, उसका भाई भी नहीं हूँ...देखो, माँ! मेरा कलेजा क्यों भारी मालूम होता है!” ये शब्द कहते मौवली ने बच्चे को नीचे उतारा।

“क्यों नहीं होगा? रातों में गीली ज़मीन पर दौड़ते हो? बुख़ार हो गया होगा!” मेस्सुवा बोली।

यह सुनते ही कि जंगल में उसे बीमारी भी होगी, मौवली मन ही मन हँस पड़ा।

"बेटा, दूध गरम करके देती हूँ, फूल-माला अलग रख दो। उसकी खुशबू सही नहीं जाती।" मेस्सुवा ने कहा।

मौवली बैठ गया। अपने हाथों से मुँह ढक कर मन में गुनगुनाने लगा। उसके मन में अनोखे विकार पैदा होने लगे। उसे यह बात सता रही थी कि उसने कोई जहरीली चीज़ खा डाली है! उसे पित्त हो गया है! मेस्सुवा के हाथ से दूध लेकर दो घूंटों में मौवली ने पी डाला। मेस्सुवा ने उसकी भुजा पर थपथपाना शुरू किया। वह चाहे उसका खोया हुआ नथुआ भले ही हो या न हो, लेकिन दयालु मानव है। इसी बात का उसे संतोष था।

"बेटा! तुम से किसी ने यह नहीं कहा कि तुम सुंदर हो?" मेस्सुवा अपनी आँखों मे गर्व का प्रदर्शन करते पूछा।

मौवली ने सर घुमाकर अपने आप को देखने का प्रयत्न किया। मेस्सुवा उसकी इस चेष्टा को देख ठठाकर हँसने लगी। उसकी हँसी रोकते रुकती न थी। मौवली भी अकारण ज़ोर से हँस पड़ा। उन दोनों की देखा-देखी छोटा लड़का भी हँसने लगा।

मेस्सुवा अपने पुत्र को गोद में उठाये बोली—"बेटा, भाई को देख कहीं हँसा जाता है? उसकी खूबसूरती में जिस दिन आधी भी तुम में दिखाई देगी, उस दिन राजा की छोटी लड़की से तुम्हारी शादी न कर दूं? तुमको हाथी के हौदे पर बिठाकर जुलूस न निकलवा दूं?"

मेस्सुवा की अधिकांश बातें मौवली की समझ में न आयीं। बहुत दूर दौड़ कर शायद वह थक गया। गरम गरम दूध पीने से उसे नींद आ गयी। वह तुरंत गहरी नींद सोने लगा। मेस्सुवा ने उसके मुँह पर बिखरे बालों को बड़े प्रेम से हटाया और उसे दुपट्टा ओढ़ कर बड़ी तृप्ति का अनुभव किया।

८६. आफ्रिका का "कल्पवृक्ष"

यह बोबोबाब है। इस पेड़ के गड्ढों पर जमा हुआ वर्षा का पानी पीने के काम में लाया जाता है। इसके पत्ते रायता में और छिलके से आँख की बीमारियों के लिए रसायन तैयार करते हैं। इसके कच्चे फलों की तरकारी बनती है। डाकार के समीप में स्थित इस पेड़ के तने की माप ६५ फुट है।

Photo by Anant Desai
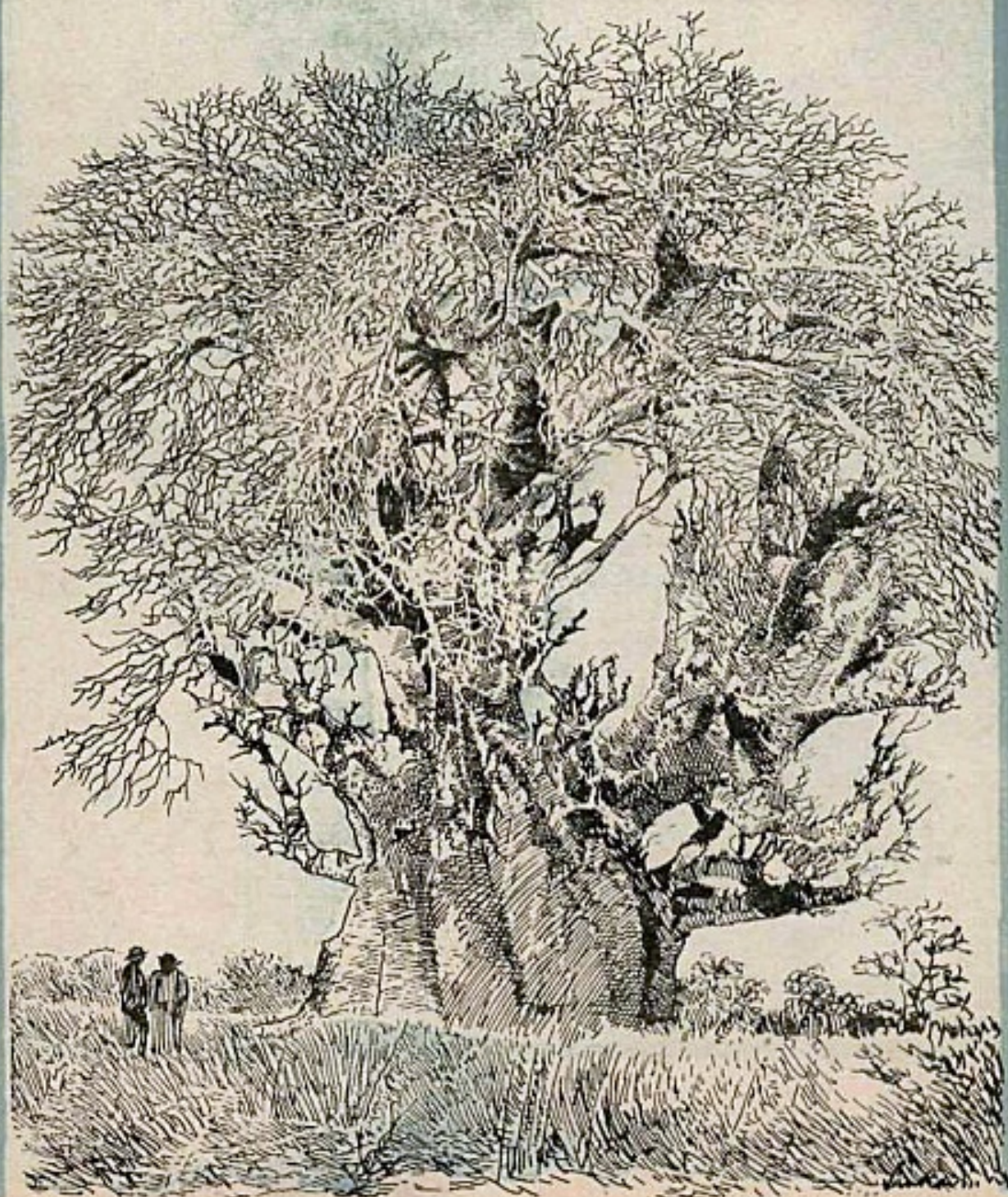
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'बोझ देखकर मत घबराना'

प्रेषिका :
कु. सरला आत्रेय

Photo by K. S. Vijayaker
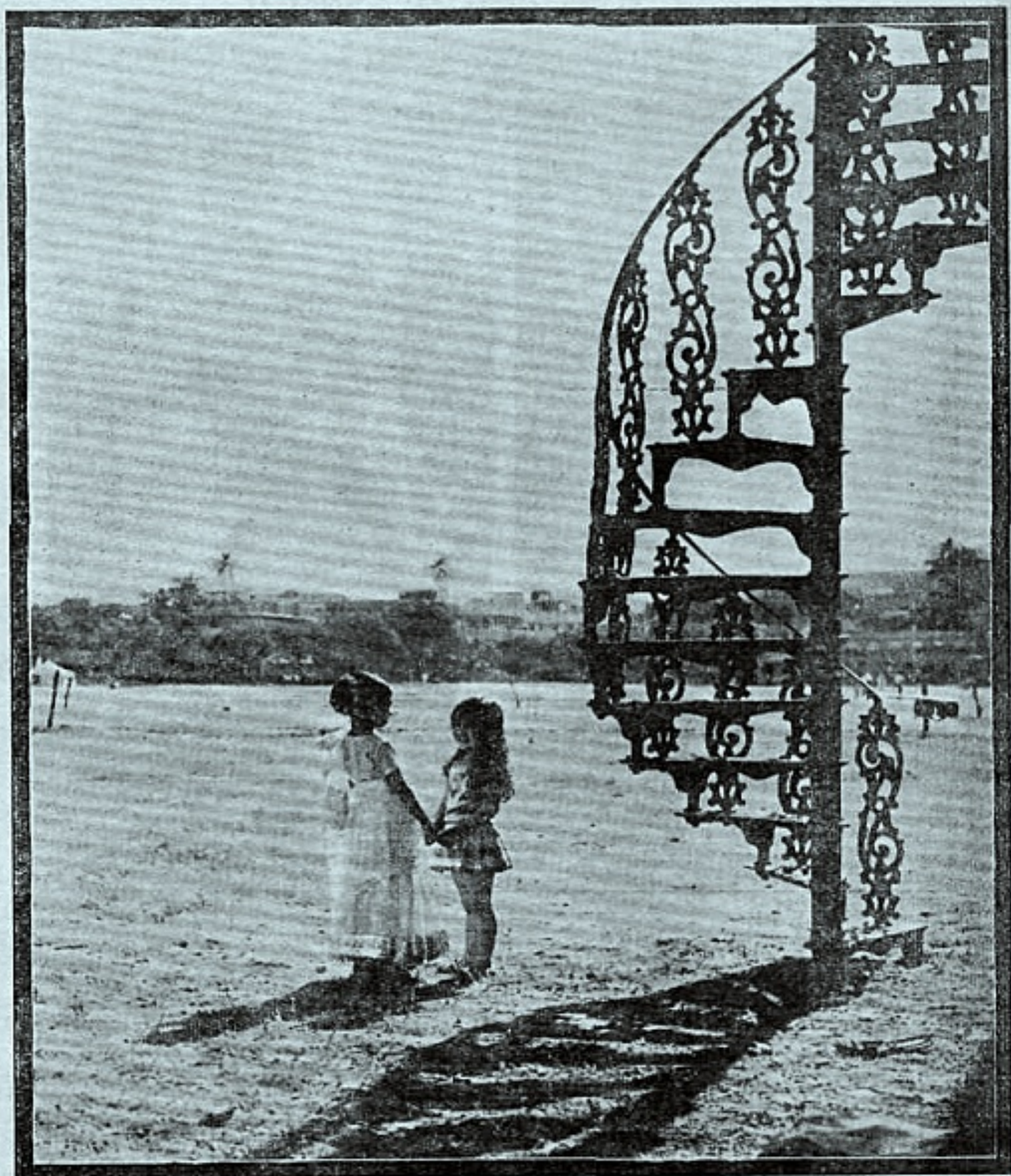
पुरस्कृत परिचयोक्ति

'देख सखी तुम भूल न जाना'

प्रेषिका : कु. सरला आत्रेय

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

अप्रैल १९६९ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें!

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख़ ७ फरवरी १९६९ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

फरवरी - प्रतियोगिता - फल

फरवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनकी प्रेषिका को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **बोझ देखकर मत घबराना!**

दूसरा फ़ोटो: **देख सखी तुम भूल न जाना!**

प्रेषिका: **कुमारी सरला आत्रेय,**

द्वारा डा. राधाकृष्ण आत्रेय गाँव: खरखोदा, ज़िला-रोहतक प्रांत: हरियाणा

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'